RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 62 अंक : 04 प्रकाशन तिथि : 25 मार्च कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 अप्रेल 2025

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

जिनके घाव लगे नवासी फिर भी खड्ग रही थी प्यासी।

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ
स्थापना : [illegible]

-: श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ के कार्य :-

- साइकल स्कीम
- 700 सभ्य की बचत स्कीम
- व्यसन मुक्ति
- कुरिवाज का त्याग
- अंध श्रद्धा को दूर करना
- प्राथमिक कक्षा के बालकों के लिए हर साल फ्री में नोटबुक और जरूरी सामग्री देना
- इनाम वितरण
- दशहरा महोत्सव
- महाराणा प्रताप जयंती महोत्सव
- गांव की प्राथमिक स्कूल में कंप्यूटर लेब निशुल्क बालकों के लिए

देवेंद्रसिंह, घनश्यामसिंह
अध्यक्ष

सिद्धराजसिंह, अनिरुद्धसिंह
उपाध्यक्ष

हशपालसिंह, जयदीपसिंह
उपाध्यक्ष

यशराजसिंह, तजवितसिंह
मंत्री

हिरेन्द्रसिंह जटुभा
संगठन मंत्री

मित्राजसिंह, नवलसिंह
संगठन मंत्री

महावीरसिंह, महेंद्रसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

भगीरथसिंह, किशोरसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

रामदेवसिंह नारुभा
महाराणा प्रताप वर्षगांठ - समन्वयक

शक्तिसिंह, राजेन्द्रसिंह
महाराणा प्रताप जयंती - सह संयोजक

सिद्धराजसिंह, जयेंद्र सिंह
दशहरा महोत्सव समन्वयक

युवराजसिंह, महेंद्रसिंह
दशहरा पर्व - सह संयोजक

Nanda Sales

"AA" Class Govt. Contractor PHED & JDA

SPECIALIST IN ALL WATER PIPELINE PROJECT, BUILDING, ROAD WORK

Nand Kishor (Ashok Swami)
Durga Lal

Mob. +91 9314054800,
+91 9314517014
Phone : 0141-2225982
Email : nanda4800@yahoo.com

Shop No. 24 Ambay Market, Ajmer Road, Jaipur

संघशक्ति

4 अप्रेल, 2024

वर्ष : 62 अंक : 04

-: सम्पादक :-

राजेन्द्र सिंह राठौड़

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय – सूची

समाचार संक्षेप		04
चलता रहे मेरा संघ	श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	05
पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	श्री चैनसिंह बैठवास	06
तेरा ही नैवेद्य बनचरणों में आऊँ...	रेंवतसिंह पाटोदा	07
हिन्दू पत सम्राट : महाराणा सांगा	राजेन्द्र सिंह बोबासर	10
जरूरत व कामना	गजेन्द्र सिंह आऊ	17
धर्म एवम् क्षात्र धर्म	अरिसाल सिंह लोहरवाड़ा	18
आत्मध्यान और मौन ही जीवन का सार है	रश्मि रामदेरिया	20
राम और कृष्ण	युधिष्ठिर	21
क्षत्रियों की सर्वश्रेष्ठ पूंजी–'चरित्र' वर्तमान...	राजेन्द्र सिंह राणीगाँव	25
आओ! कुछ चिन्तन करें	संकलित	28
खंडहर बता रहे वैभव की गाथा	डॉ. मातुसिंह मानपुरा	30
अपनी बात		33

समाचार संक्षेप

संघशक्ति भवन जयपुर में ब्रह्मचर्य स्वयंसेवकों का शिविर :– दिनांक 3–4 फरवरी को संघशक्ति भवन में ब्रह्मचारी स्वयंसेवकों का दो दिवसीय शिविर आयोजित हुआ। जिसमें 60 अविवाहित स्वयंसेवकों ने भाग लिया। माननीय संघप्रमुख श्री लक्ष्मणसिंह जी बैण्याकाबास ने शिविर का संचालन किया। उपस्थित शिविरार्थियों से संवाद करते हुए माननीय संरक्षक श्री ने ब्रह्मचय की महत्ता बताई एवं ब्रह्मचर्य का अर्जन करने के लिए संयम की साधना पर बल दिया। शिविर में ब्रह्मचर्य के महत्त्व, उसकी साधना, उत्कृष्ट, गृहस्थ जीवन की तैयारी के लिए ब्रह्मचारी जीवन की सावधानियों आदि पर विस्तार से जानकारी दी गई।

संघप्रमुख श्री का कच्छ (गुजरात) प्रवास :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के संघप्रमुख माननीय श्री लक्ष्मणसिंह बैण्याकाबास 8 से 10 मार्च तक गुजरात के कच्छ प्रान्त के प्रवास पर रहे। तीन दिवसीय प्रवास के दौरान संघप्रमुख श्री कच्छ क्षेत्र में 8 मार्च को गेड़ी, भुज तथा मोटी चिरई, 9 मार्च को नाना हेड़ा, गजोड़, मुंद्रा तथा भुजपुर तथा 10 मार्च को रखत्राणा तहसील के बीबर गाँव एवं भुज तहसील के झुरा केम्प गाँव के स्नेह मिलन के कार्यक्रमों में उपस्थित रहे। माननीय संघप्रमुख श्री ने उपस्थित समाज बन्धुओं से संवाद करते हुए समाज की भावी पीढ़ी में क्षत्रियोचित संस्कार के निर्माण की दृष्टि से भी क्षत्रिय युवक संघ की आवश्यकता के बारे में बताया और सभी से अपने परिवार के बालक–बालिकाओं को संघ से जोड़ने का आग्रह किया।

श्री डूंगरगढ़ में प्रांतीय समीक्षा की बैठक :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के बीकानेर संभाग के श्री डूंगरगढ़ प्रान्त की समीक्षा बैठक दिनांक 9 मार्च को आयोजित की गई जिसमें अप्रेल माह के दम्पत्ति शिविर व ग्रीष्मकालीन उच्च प्रशिक्षण शिविर में सम्मिलित होने वाले स्वयंसेवकों की सूची तैयार करने तथा संघशक्ति व पथ प्रेरक के सदस्य बनाने पर भी चर्चा की गई।

रोजड़ा में विशेष शाखा का आयोजन :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के चित्तौड़गढ़ प्रान्त के गाँव रोजड़ा में स्थित राधा–कृष्ण मंदिर परिसर में 2 फरवरी को विशेष शाखा का आयोजन किया गया। जिसमें सामूहिक यज्ञ किया गया एवं श्री क्षत्रिय युवक संघ के उद्देश्य व कार्यप्रणाली के बारे में विस्तार से जानकारी दी गई। इसी क्रम में 16 फरवरी को तालेड़ी गाँव में रावला परिसर एवं 23 फरवरी को चित्तौड़गढ़ की करणी विहार कॉलोनी में भी विशेष शाखा का कार्यक्रम रखा गया।

जयपुर संभाग की मासिक बैठक :– 22 फरवरी को संघशक्ति भवन में जयपुर संभाग की बैठक आयोजित की गई जिसमें उच्च प्रशिक्षण शिविर उदयपुर में भाग लेने वाले शिविरार्थियों की सूची बनाई गई। संघशक्ति एवं पथ प्रेरक के सदस्य बनाने का दायित्व दिया गया।

श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की कार्य विस्तार बैठकें :– 23 फरवरी को सेखाला, जिला–जोधपुर एवं आऊ जिला–फलौदी में फाउण्डेशन की कार्य विस्तार बैठकों का आयोजन किया गया, जिसमें युवा वर्ग की शक्ति को सकारात्मक दिशा में मोड़ने तथा फाउण्डेशन के कार्यों को विस्तार देने पर चर्चा की गई।

महाराणा प्रताप वार्षिक जियोपॉलिटिक्स संवाद 2025 का आयोजन दिनांक 16 फरवरी, 2025 को होटल क्लार्क्स आमेर में आयोजित किया गया। जिसमें वक्ताओं ने महाराणा प्रताप की नीति, नेतृत्व व दृष्टिकोण की प्रशंसा की तथा इन्हें आज की वैश्विक राजनीति में भी प्रासांगिक बताया। ●

चलता रहे मेरा संघ

(माननीय श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर के मेवाड़ क्षेत्र के प्रवास के समय एक स्थान पर दिए गये उद्‌बोधन का संक्षेप)

मेवाड़ में जब भी मैं आता हूँ तो मेवाड़ का इतिहास याद हो ही जाता है। मेवाड़ का इतिहास इतना उज्ज्वल रहा है कि इतिहास की बात आते ही वह स्मरण हो आता है। मेवाड़ में आकर, अत्यन्त उज्ज्वल इतिहास वाले मेवाड़ में आकर जब क्षत्रिय युवक संघ की बात करते हैं तो लगता है कि संघ को यहाँ अपेक्षित सहयोग नहीं मिल रहा है। सफेद कपड़े पर थोड़ा-सा भी दाग लग जाता है तो बहुत बुरा लगता है। इस क्षेत्र में उज्ज्वल चरित्र वाले क्षत्रिय रहे हैं और उन्होंने इतिहास में अपने चरित्र की छाप छोड़ी है। तब थोड़ी मन में पीड़ा-सी होती है कि आज क्या हो गया? इस क्षेत्र से अपेक्षाएँ बहुत हैं। पढ़ाने का काम एक पढ़ा व्यक्ति ही कर सकता है। जिसके पास पैसा है, वही पैसा दे सकता है, कंगाल क्या दान करेगा? क्षत्रिय चरित्र की छाप छोड़ने वाले इस क्षेत्र में जब भी आता हूँ तो उम्मीद रहती है कि मेरी झोली में सहयोग की गांठ गिरेगी लेकिन खाली झोली लेकर ही चला जाता हूँ।

पूज्य तनसिंह जी ने कहा है कि अंत समय तक धैर्य रखूंगा। किसका अंत समय? इस शरीर का अन्त तो थोड़े ही समय में हो जाएगा। उस समय तक यह शिविर तो धैर्य रखे ही, पर श्री क्षत्रिय युवक संघ का तो समय समाप्त होने वाला ही नहीं है अत: संघ तो सदैव धैर्य रखेगा ही। किस बात का धैर्य? संघ की बात को, विचार को, भाव को चारों ओर प्रसारित करने हेतु धैर्य का कोई कोना अछूता न रह जाए यह प्रयास लगातार चलता रहेगा। इसलिए अपेक्षित सहयोग नहीं मिलता तो भी आता रहूंगा, संघ आता रहेगा। मैं आता हूँ या मुझे भेजा गया है, यह भी चिन्तन बना रहता है। इसलिए किसी प्रकार का आग्रह रखे बिना यहाँ मिलने आता हूँ। यहाँ बहुत अच्छा स्वागत होता है, बड़ा मान मिलता है लेकिन जो चाह (अपेक्षित सहयोग) वो नहीं मिलता। फिर भी संघ सदैव धैर्य रखेगा और आता रहेगा।

यहाँ इतने युवा लड़के बैठे हैं। इनको देखकर हृदय के कपाट खुल जाते हैं, इच्छा होती है संघ की कि ये आ जाएँ और मेरे में समा जाएँ। लेकिन ऐसा नहीं होता क्योंकि ऐसी चाह इनकी बनती नहीं। बाहर चारों तरफ जो दुष्प्रभाव है, उसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। माता-पिता कितने ही अच्छे हों, जिस बाहरी वातावरण में रहते हैं, उसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। इस दुष्प्रभाव को रोकने का प्रयत्न कौन करे? आज यह प्रयास मैं करूँ, आप करें इससे दुष्प्रभाव रोकने की क्रिया सफल होना मुश्किल है। यह क्रिया मूल रूप से तो बच्चे के जन्म के साथ ही शुरू हो। बच्चे का माता-पिता द्वारा, परिवार द्वारा इस ढंग से पालन किया जाए कि उसको सद्‌संस्कार मिलते रहें। परिवार के हर सदस्य का आचरण बालक पर प्रभाव डालता है। पालन-पोषण केवल शरीर का ही न हो बल्कि उसके स्वभाव में सद्‌संस्कारों को पोषित करने का भी हो। परन्तु आज न तो हमारा और न हमारे परिवारों का वैसा वातावरण रहा है। इसलिए आवश्यकता है श्री क्षत्रिय युवक संघ की। सामूहिक संस्कारमयी कर्मप्रणाली द्वारा संस्कार निर्माण का कार्य करता है संघ। संघ में निरन्तरता और नियमितता बनी रहे तो संस्कारों का निर्माण होता है, संस्कारों की सुदृढ़ता बनती है। साथ ही परिवारों में भी उन्हें अच्छा वातावरण मिले तो समाज में सद् आचरण, सद्व्यवहार और जागृति की भोर आएगी। संघ इसीलिए अपने प्रयास में लगा रहता है। इसीलिए बार-बार आता है। आता रहेगा। ●

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

पूज्य श्री तनसिंह जी की राजनीति में कोई रुचि नहीं थी, इसलिए वे राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने के पक्षधर नहीं थे, किन्तु श्री आयुवान सिंह जी राजनीति में सक्रिय रहने के प्रबल समर्थक थे, तो फिर पूज्य श्री तनसिंह जी का राजनीति में सक्रिय प्रवेश किस तरह हुआ? इस सम्बन्ध में श्री चन्द्रसिंह जी क्या कहते हैं, उन्हीं की जुबानी–

''तनसिंह जी का मेरे प्रति विश्वास एवं आत्मीयता उत्तरोत्तर बढ़ता जी गया तथा वे महत्त्वपूर्ण मामलों में भी मेरे से विचार-विमर्श करना उचित समझने लगे। जब उनके राजनीति में प्रवेश करने का प्रश्न उठा तो मैं इसके लिए पूरी तरह पक्ष में था। इस सम्बन्ध में वे निरन्तर मेरे विचार जानना चाहते थे तथा उन विचारों को महत्त्व देते थे। कुछ लोग उनके राजनीति में आने का यह कहकर विरोध कर रहे थे कि उससे संघ कार्य को हानि होगी। मेरा विचार था कि इससे संघ कार्य को बल ही मिलेगा तथा किसी भी स्तर पर अगर इसे अवरोध समझेंगे तो हम उन्हें राजनीति से वापिस निकाल लेंगे। कितना दृढ़ विश्वास था मेरा उनके प्रति कि जब चाहे वापिस भी ले आयेंगे। आज के सत्तालोलुप राजनेताओं और कुर्सी से चिपके तथाकथित समाज सेवकों के प्रति क्या कोई ऐसा विश्वास व्यक्त करने की हिम्मत कर सकता है?''

''इस सम्बन्ध में मुझे सम्बोधित उनका एक पत्र उद्धृत करना प्रासंगिक होगा–

प्रिय चन्द्रसिंह सरदारपुरा, बाड़मेर
9 नवम्बर, 1951

जय संघ शक्ति!

मैं आया था तब आप मिले नहीं। मुझे आज अधिकृत रूप से मालूम हुआ कि मुझे बाड़मेर की ए निर्वाचन क्षेत्र (Constituency) से चुनाव में खड़ा करने का आयोजन हो गया है, जिसके पीछे मदनसिंह जी दांता व कुछ जोधपुर के विशिष्ट लोगों का हाथ है। मैं हाँ दूँ या ना दूँ, कुछ समझ नहीं आ रहा है। ना देने पर मदनसिंह जी दांता तथा कुछ अन्य लोग ऐसा कह सकते हैं कि हम खड़ा करना चाहते हैं, किसी व्यक्ति को योग्य समझ कर, किन्तु वह हमारी बात न मानकर अपनी हेकड़ी रखकर कार्य करने से जी चुराता है। मेरे चुनाव के पक्ष में मेरा खुद का मन नहीं था अत: अंत तक मैंने कोई निर्णय नहीं किया है। मगर उपरोक्त बात को देखते हुए मुझे हाँ भरने की लाचारी महसूस हो रही है। मगर हाँ भरने के पहले मुझे आपकी अनुमति लेना बहुत जरूरी है। कारण कि चुनाव में पहले आपने ही अपनी राय दी थी इसलिए आप यदि अनुमति दें तो मैं खड़ा हो जाऊँ।''

इसका उत्तर जल्दी दें। पत्र को तार समझें और शीघ्राति-शीघ्र उत्तर भेजें।

भवदीय

ह. तनसिंह

तनसिंह जी मेरे से वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध एवं संघ परिवार के मुखिया (संघप्रमुख) थे। किन्तु राजनीति में प्रवेश के लिए मेरी अनुमति लेनी बहुत जरूरी बताना, क्योंकि मैंने ही यह राय उनको दी थी तथा मैं अनुमति दूँ तो वे खड़े हो जावें, आदि लिखना उनकी आत्मीयता एवं बड़प्पन का द्योतक है।

घटनाक्रम तेजी से घूमता रहा। मैं उनके राजनीति में प्रवेश की मेरी राय पर दृढ़ था। पत्रों तथा व्यक्तिगत विचार-विमर्श

(शेष पृष्ठ 9 पर)

तेरा ही नैवेद्य बन चरणों में आऊँ....

– रेंवतसिंह पाटोदा

हमारे किसी विचार को अंगीकार करने में, अंगीकृत विचार के अनुकूल मार्ग पर प्रवृत्त होने में हमारी कोई न कोई चाह उत्प्रेरक का काम करती है। हमारी वह चाह कुछ हासिल करने की हो सकती है, कुछ बनने की हो सकती है या कहीं पहुँचने की हो सकती है। हर हलचल का कुछ लक्ष्य होता ही है, वह लक्ष्य ही उस हलचल को सार्थक करता है अन्यथा तो ऐसी हलचलें निरर्थक ही मानी जाती हैं। वह चाह अलग-अलग स्तर के व्यक्ति की अलग-अलग हो सकती है। सामान्य सांसारिक मनुष्य की चाह धन, संपदा, पद, प्रतिष्ठा, सुख, वैभव आदि की ही हुआ करती है। इनमें भी चलने वाले व्यक्ति के स्तर के अनुसार विविधता होना स्वाभाविक है। इन सभी चाहों का वर्गीकरण करें तो इन्हें दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। पहला भाग प्रतिष्ठा का हो सकता है और दूसरा भाग सांसारिक सुखों का हो सकता है।

पूज्य तनसिंह जी की कृपा प्रसाद से हम श्री क्षत्रिय युवक संघ के पथिक बने हैं और ऐसे पथिक की इस मार्ग पर चलने की प्रेरणा कौनसी चाह बने, इसका मार्गदर्शन पूज्य तनसिंह जी ने परमेश्वर से की गई अपनी प्रार्थना में किया है। उन्होंने लिखा है-

'उच्च सिंहासन ना मुझे बताना,
स्वर्ग का चाहे ना द्वार दिखाना।
जाति की फुलवारी में पुष्प बनाना,
ताकि मैं सौरभ से जग को रिझाऊँ।।'

ऊपर जैसा लिखा है कि सामान्य मनुष्यों की चाह प्रतिष्ठा की होती है या फिर सांसारिक सुखों की। प्रतिष्ठा पद से मिलती है, जो जितने बड़े पद पर होगा, उसकी प्रतिष्ठा भी उतनी ही अधिक मानी जाएगी। इसलिए प्रतिष्ठा की चाह रखने वाले लोग बड़े से बड़ा पद हासिल करना चाहते हैं, ऊँचे से ऊँचा सिंहासन हासिल करना चाहते हैं। दूसरी चाह सुख की होती है और सुखों के स्तर में स्वर्गिक सुखों को सर्पोपरी माना जाता है। संसार में प्रचलित अधिकांश विचारधाराओं की खोज स्वर्गिक सुखों पर जाकर खत्म हो जाती है और सामान्यतया इन्हीं सुखों को सर्वोपरी मानकर उनकी चाह में ही व्यक्ति कर्मशील बनता है। लेकिन पूज्य तनसिंह जी की प्रार्थना में इन दोनों ही चाहों को कोई स्थान नहीं दिया गया है। उनके अनुसार श्री क्षत्रिय युवक संघ के मार्ग पर चलने वाले पथिक को इस मार्ग से उच्च सिंहासन और स्वर्गिक सुख, दोनों की ही कामना नहीं चाहिए। यदि हमारे अंतस में उपरोक्त दोनों प्रकार की चाह हैं, या इन चाहों से प्रेरित होकर हम इस मार्ग पर प्रवृत्त हुए हैं तो हमें हमारी इन चाहों का परिशोधन करना पड़ेगा और उन्हें उन्नत बनाने के लिए प्रस्तुत होना पड़ेगा। यदि हम प्रस्तुत होंगे तो संघ अपने अभ्यास मार्ग द्वारा यह परिशोधन कर हमारी चाह को उन्नत बना सकेगा।

पूज्य तनसिंह जी के अनुसार वह उन्नत चाह है जाति की फुलवारी में पुष्प बनना। कौनसी जाति की फुलवारी में? उस जाति की फुलवारी में जिसने संसार को अपने त्याग व बलिदान द्वारा सींच कर सांसारिक ही नहीं बल्कि परमार्थिक उन्नति के मार्ग पर भी बढ़ाया। जो जाति सदैव नर रत्नों की खान रही और जिस खान से पैदा होने वाले रत्नों ने संसार की समस्त ऊँचाईयों को छूकर भी अपने कर्तव्य को ही अधिकार माना और उस कर्तव्य की पालनार्थ संसार को समस्त प्रकार की ऊँचाइयों की ओर ले जाने के लिए अपनी समस्त विशिष्टताओं को यज्ञ में शाकल्य की तरह होम दिया। हाँ, उसी क्षत्रिय जाति की फुलवारी में पुष्प बनने की चाह है जिसे

भगवान ने भी अपनी प्रकृति को वश में कर मानव रूप में पृथ्वी पर अपने अवतरण के लिए चुना। इस फुलवारी में हमारा अंकुरण तो परमेश्वर की कृपा और हमारे पूर्व जन्मों के सद्कर्मों के फलस्वरूप हो गया लेकिन इस अंकुरण को फलीभूत कर सौरभशाली पुष्प बनना हमारे पुरुषार्थ और तद्नुसार परमेश्वर से हमारी प्रार्थना पर निर्भर है। इसीलिए चाह प्रकट करते हुए प्रार्थना की गई है कि मुझे इस क्षत्रिय जाति की फुलवारी का ऐसा पुष्प बनाना जिसकी सुगंध समस्त संसार में प्रसारित हो और संसार उस सुगंध के सहारे अपनी उन्नति के मार्ग पर प्रशस्त हो सके।

लेकिन हर पुष्प की भी यह वास्तविकता है कि वह डाली पर कली के रूप में पैदा होकर खिलता है और संपूर्ण रूप से खिलने के बाद मुरझा कर टूट जाता है या तोड़ लिया जाता है। दोनों ही परिस्थितियों में उसका डाली से अलग होना अवश्यंभावी है। कोई भी पुष्प अनन्त काल तक डाली पर नहीं रहा करता, यह इस सृष्टि का अटल नियम है। यह अटल नियम क्षत्रिय जाति की फुलवारी में खिले पुष्पों पर भी लागू है, इसलिए प्रार्थना में इस सार्वभौमिक सत्य को स्वीकार करते हुए भी शर्त लगा दी है कि,

'डाली से तोड़ा भी जाऊँ तो भगवन,
तेरा ही नैवेद्य बन चरणों में आऊँ।'

जब भी मैं इस फुलवारी में उगे पौधे की डाली से तोड़ा जाऊँ तो नैवेद्य की भाँति परमेश्वर के चरणों में चढ़ाया जाऊँ। यही तो हर जड़ चेतन की शाश्वत गति है कि वह अपने उद्गम में समाहित हो जाये। जहाँ से आया है वहाँ चला जाए। सागर में सूर्य की ऊष्मा से भाप बनी बूंद बादल बनकर, बरस कर, नदी नाले में प्रवाहित होकर पुन: सागर में मिल जाए तब ही उस बूंद को स्वयं में समाये सागर का अहसास हो पाता है। कौन बूंद है जो सागर बनना नहीं चाहती और जो नहीं बनना चाहती उसे भी कीचड़ बनकर, पुन: भाव बनकर, बादल बनकर, बरस कर और फिर बूंद बनकर सागर बनना ही पड़ता है। जब तक वह सागर नहीं बन जाती तब तक उसे उसी प्रकार ताप सहकर, भाप बनकर, बरस कर फिर बूंद बनते जाना पड़ेगा। इसलिए जो बूंद जितना जल्दी प्रयास पूर्वक सागर में समाहित हो जाती है वह उतनी ही जल्दी सागर की अनन्तता को प्राप्त हो जाती है, अन्यथा तो वह भाप बनने और बरसने के चक्र में ही फँसी रहती है। वैसी ही चाह यहाँ प्रकट की गई है कि डाली से टूटने पर परमेश्वर के चरणों में नैवेद्य बन समर्पित हो जाऊँ।

लेकिन यह बात कहने में जितनी सरल है, करने में उतनी ही कठिन है। भगवान कहते हैं कि हजारों में कोई एक ऐसी चाह हो जागृत कर पाता है, ऐसी चाह रखने वाले हजारों में कोई एक चल पाता है और चलने वाले हजारों में कोई एक ही पहुँच पाता है, अपने आपको चरणों में समर्पित कर पाता है। इसलिए सामान्य व्यक्ति तो ऐसी बात को कहने में भी संकोच ही करता है और सांसारिक प्राप्तियों में ही अपने आपको संलग्न रखता है, वह इन सब बातों को सामान्य व्यक्ति के लिए अप्राप्य मानकर साधु-संतों और संन्यासियों का विषय मानता है लेकिन पूज्य तनसिंह जी ने सरलता से इसे समझाते हुए अपने अनुयायियों में यह चाह उत्पन्न की। उन्होंने बताया कि समस्त जड़ उपलब्धियाँ किसी चेतन तत्त्व की प्राप्ति के लिए ही होती हैं। हर जड़ उपलब्धि की सार्थकता इसी में है कि वह चेतन की ओर अग्रसर करे, यदि वह ऐसा नहीं करती है तो प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध ही करती है। इस संसार में जो जितना उस चेतन तत्त्व के समीप है वह उतना ही जागृत है और वह उतना ही अन्यों से श्रेष्ठ है। संसार में श्रेष्ठता का यही उचित मापदंड है। चेतना के निम्न स्तर पर रहने वाले लोगों के लिये स्वयं से अधिक चेतन व्यक्ति सदैव आदरणीय और पूजनीय होता है। हम हमारे आसपास के वातावरण का गहराई से अध्ययन करेंगे तो पाएँगे कि संसार में चेतना का इतना

महत्त्व है कि जिन स्थानों का किसी चेतन व्यक्ति का संबंध रहा है वे जड़ स्थान भी लोगों की आस्था के केन्द्र बनकर जागृत हो जाते हैं और ऐसे जागृत स्थान तीर्थ स्थल के रूप में लोगों की चेतना को जागृत करने के माध्यम बन जाते हैं। इसीलिए जाति की फुलवारी में पुष्प बनने, उस पुष्प से निकलने वाले सौरभ से संसार को लाभान्वित करने की चाह भी मंजिल नहीं है, मंजिल तो नैवेद्य बनकर परमेश्वर के चरणों में अर्पित होना ही है, इसलिए सर्वश्रेष्ठ चाह तो यही है और इसका सदैव स्मरण भी बना रहना चाहिए लेकिन पूज्य तनसिंह जी द्वारा उद्धृत मार्ग में इस चाह तक पहुँचने के लिए जाति की फुलवारी में पुष्प बनकर संसार में सौरभ का प्रसारण करना ही उस मंजिल तक पहुँचने का सौपान है। इसीलिए पूज्य श्री ने इस फुलवारी को भी परमेश्वर का ही स्वरूप मानकर उसकी अर्चना का मार्ग प्रशस्त किया है ताकि यह मार्ग हमें परमेश्वर का नैवेद्य बना सके। इसके लिए इस मार्ग पर बने रहने का हमारा पुरुषार्थ और हमारे में उस पुरुषार्थ को जागृत करने के लिए पूज्य तनसिंह जी से हमारे पर कृपा बनाये रखने की हमारी प्रार्थना जारी रहे। ●

पृष्ठ 6 का शेष

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

द्वारा हमारा सम्पर्क निरन्तर बना रहा। इस बीच तत्कालीन राजनीतिक दाँव पेंच की क्षुद्र नीति से वे आहत भी हुए। महाराजा साहब जोधपुर को उनके जन्म घर के बारे में गलतफहमी करवाई गई, कई उतार-चढ़ाव आये, वे सभी भी वे सूचित करते रहे। इस सम्बन्ध में उनका दूसरा पत्र दिनांक 27 नवम्बर, 1951 प्रासंगिक है-

प्रिय चन्द्रसिंह बाड़मेर

27 नवम्बर, 1951

आपका पत्र दिनांक 14 नवम्बर, 1951 का मिला। मुझ में बहुत बीती। संक्षेप में बात इस प्रकार है। इस बार राजस्थान क्षत्रिय महासभा व भूमि पर धर संघ के बीच मन-मुटाव चला जिसमें जोधपुर के H.H. को मध्यस्त रखा गया। मैं अनुपस्थित था। आयुवानसिंह जी व मोहनसिंह जी ने बाड़मेर के लिए मेरा नाम Suggest किया। प्रश्न उठने पर खड़ा करने की जिम्मेदारी उन्होंने खुद ने ले ली। मुझे उन्होंने कहा कि हमने आपके विश्वास पर आपकी जिम्मेवारी ले ली। मेरे लिए कोई रास्ता नहीं था। हाँ भरनी पड़ी। दुबारा मेरे कुछ विरोधियों ने H.H. को भड़काया कि उसे कोई वोट नहीं देगा। उस वक्त नाम काट दिया गया। उसी वक्त आपका पत्र आया। जोधपुर हम बुलाये गये थे। दूसरे के नाम भी तय हो चुके थे। मगर फिर साथियों को लगा कि यह हमारी हार है। फिर H.H. को कहा, मुझे बाध्य किया गया है हाँ भरने को। हाँ भरनी पड़ी। अब फार्म भर दिया है। कल Scrutiny होगी। मेरा फार्म गलत होने का मुझे पूर्ण अंदेशा है। कल निपटारा हो जाएगा। यदि गलत नहीं हुआ तो चुनाव लड़ना ही पड़ेगा।

संघ कार्य से बढ़कर कोई कार्य प्राथमिकता नहीं ले सकता। इसका तो भरोसा ही रखना है। यह जरूर है कि मेरा जीवन बहुत व्यस्त हो जावेगा। अच्छा ही है आलसी किस काम का। काम तो करना चाहिये। चुप बैठे रहने से बेगार अच्छी। शेष हालात मालूम हो जावेंगे।

भवदीय

ह. तनसिंह

अंततः वे राजनीति में सफलतापूर्वक आये तथा सफल विधायक एवं सांसद रहे लेकिन संघ कार्य उनके जीवन की प्राथमिकता ही नहीं बल्कि एकमात्र उद्देश्य उनके जीवन के अन्त समय तक रहा। **(क्रमशः)**

हिन्दू पत सम्राट : महाराणा सांगा

– राजेन्द्र सिंह बोबासर

ब्रिटिश इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड का कथन ''विश्व के इतिहास में से भारत का इतिहास निकाल दिया जाये तो पीछे कुछ नहीं बचेगा, भारत के इतिहास में से राजस्थान का इतिहास निकाल दिया जाये तो पीछे कुछ नहीं बचेगा तथा राजस्थान के इतिहास में से मेवाड़ के इतिहास को निकाल दिया जाये तो पीछे कुछ नहीं बचेगा।''

उक्त कथन से मेवाड़ के इतिहास की महत्ता का पता चलता है। विश्व इतिहास के आकाश में मेवाड़ का इतिहास एक देदीप्यमान नक्षत्र की भाँति चमकता रहा है। बाप्पा रावल से लेकर महाराणा फतेह सिंह तक लगभग 1000 साल तक मेवाड़ के शासकों ने विदेशी आक्रान्ताओं से लगातार संघर्ष किया तथा देश, धर्म, संस्कृति की रक्षा की थी। उन्हीं महान् प्रतापी शासकों में एक नाम है महाराणा संग्राम सिंह जो राणा सांगा के नाम से प्रसिद्ध हुए।

महाराणा सांगा का प्रारम्भिक जीवन परिचय :– मेवाड़ के महान शासक महाराणा कुम्भा के पौत्र थे महाराणा सांगा। रायमल जी राणा सांगा के पिता थे। महाराणा सांगा का जन्म 12 अप्रेल, 1482 ई. को हुआ। राणा रायमल के तीन पुत्र थे– 1. पृथ्वीराज, 2. जयमल, 3. संग्राम सिंह। तीनों राजकुमार किशारोवस्था को प्राप्त हुए। रायमल जी के बाद मेवाड़ का शासक कौन बनेगा इस विषय पर तीनों में आपसी बहस और विवाद होता रहता था। तीनों ही बड़े महत्त्वाकांक्षी थे तथा अपने आपको उत्तराधिकारी मानते थे। एक दिन उनके चाचा सारंगदेव ने कहा कि आप तीनों ही बिना वजह बहस करते रहते हो। भीमल गाँव की एक चारणी है जो भविष्य वक्ता है, उसी से पूछ लिया जाए कि रायमल जी के बाद मेवाड़ का सिंहासन किसे मिलेगा। तीनों राजकुमार चाचा सारंगदेव के साथ गये। चारणी को अपना-अपना भविष्य बताने को कहा। चारणी ने तीनों का भविष्य देखकर कहा कि रायमल जी के बाद मेवाड़ के राणा सांगा जी बनेंगे। इस पर तीनों में झगड़ा शुरू हो जाता है तथा पृथ्वीराज की तलवार के वार से सांगा की एक आँख फूट गई। सांगा वहाँ से निकल कर राजसमंद के एक गाँव सेवंतरी में आ जाते हैं जहाँ मारवाड़ के जैतमालोत बीदा राठौड़ अपने दल के साथ ठहरा हुआ था। घायल सांगा को बीदा राठौड़ अपने पास रख लेता है। थोड़ी देर में ही जयमल अपने दल सहित सांगा का पीछा करते हुए वहाँ पहुँच जाता है। बीदा राठौड़ अपना घोड़ा सांगा को देकर वहाँ से भगा देता है तथा स्वयं जयमल से संघर्ष करते हुए मारा जाता है। कालान्तर में इस उपकार के बदले मेवाड़ का शासक बनने पर राणा सांगा जैतमालोतों को मेवाड़ में जागीर प्रदान करते हैं। वहाँ से पलायन कर सांगा अजमेर के श्रीनगर स्थान पर पहुँचते हैं जहाँ कर्मचन्द पंवार के संरक्षण में रहकर युद्ध कौशल सीखते हैं।

उधर मेवाड़ में स्थितियाँ बदलती चली गई। टोडा का सामान्त सुरतान सोलंकी राज छिन जाने के कारण मेवाड़ में शरण लिए हुए था। उसके तारा नामक एक पुत्री थी जिससे जयमल विवाह करना चाहता था। जयमल ने कहा कि पहले वह तारा को देखेगा। उस समय लड़की देखने की कोई परम्परा नहीं थी, अत: सुरतान सोलंकी ने इन्कार कर दिया, इस पर विवाद बढ़ गया। सुरतान सोलंकी के साले रतनसिंह सांखला ने राजकुमार जयमल की हत्या कर दी। राणा रायमल को जब अपने पुत्र की हत्या का समाचार मिलता है तो हत्या का कारण जानकर वे सोलंकियों को कोई सजा नहीं देते और कहते हैं कि महिलाओं से ऐसा दुर्व्यवहार करने वाले को ऐसी ही सजा मिलनी चाहिए।

राजकुमार पृथ्वीराज की मृत्यु :– जयमल की मृत्यु

पश्चात् पृथ्वीराज टोड़ा के अतिक्रमणकारी पठान को हरा देता है तथा टोड़ा जीतकर सोलंकियों को भेंट कर देता है। सुरतान सोलंकी अपनी पुत्री तारा का विवाह राजकुमार पृथ्वीराज से कर देता है। इसी तारा के नाम पर अजमेर के किले का नाम तारागढ़ पड़ा। राजकुमार पृथ्वीराज की बहिन आनन्दा बाई का विवाह सिरोही के शासक जगमाल देवड़ा के साथ किया गया था। जगमाल,आनन्दा बाई के साथ दुर्व्यवहार करता था। इसका समाचार जब पृथ्वीराज को मिला तो वह ससैन्य सिरोही पर आ धमकता है। जगमाल देवड़ा पृथ्वीराज की शक्ति से परिचित था उसने आगे से आनन्दाबाई के साथ दुर्व्यवहार न करने का वचन दिया। पर उसका मन साफ नहीं था। जब पृथ्वीराज वापिस जाने लगा तो जगमाल ने उन्हें लड्डू बनवाकर दिये। पृथ्वीराज को कहा कि रास्ते में खा लेना। कुंभलगढ़ के पास पृथ्वीराज ने वे लड्डू खाये, उनमें जहर मिला हुआ था, इसी से पृथ्वीराज की मृत्यु हो जाती है।

राणा रायमल को जब पृथ्वीराज की मृत्यु का समाचार मिला तो वे बड़े चिंतित हुए। उनके दो राजकुमार मृत्यु को प्राप्त कर चुके थे तथा तीसरे सांगा भी मेवाड़ में उपस्थित नहीं थे। राणा को उत्तराधिकारी की चिंता सताने लगी। उधर सांगा को दोनों भाईयों की मृत्यु का समाचार मिला तो वे चित्तौड़ लौट आये। उस समय रायमल मृत्यु शैया पर लेटे हुए थे। सांगा के आने का समाचार सुन उन्होंने चैन की सांस ली। शीघ्र ही रायमल की मृत्यु हो जाती है।

सांगा का राज्याभिषेक तथा उत्तर भारत की राजनैतिक स्थिति :– राणा रायमल की मृत्यु उपरान्त 24 मई, 1509 ई. में राणा सांगा का राज्याभिषेक हुआ। जिस समय सांगा का राज्याभिषेक हुआ, उनकी आयु लगभग 27 वर्ष की हो चुकी थी। वे पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर चुके थे। श्रीनगर अजमेर में प्रवास के दौरान कर्मचन्द पंवार से सैन्य संचालन तथा राजनीति संचालन के गुर सीख चुके थे। शासक बनते ही उन्होंने पड़ौसी राज्यों का आंकलन करना शुरू किया।

1. दिल्ली सल्तनत– मेवाड़ से उत्तर-पूर्व में दिल्ली की रियासत थी यहाँ इस समय लोदी वंश का सुल्तान सिकन्दर लोदी शासन कर रहा था। **2. मालवा की रियासत–** यह भी एक मुस्लिम राज्य था। यहाँ पर नासिर शाह खिलजी का शासन था। **3. गुजरात की रियासत–** मेवाड़ राज्य के दक्षिण में गुजरात प्रदेश में भी मुस्लिम रियासत थी, यहाँ मुज्फ़र शाह का शासन था। राजस्थान में मारवाड़ तथा बीकानेर के राज्य प्रमुख थे।

राणा सांगा का साम्राज्य विस्तार :– राणा सांगा बड़े ही महत्त्वाकांक्षी तथा साम्राज्य विस्तार की नीति पर चलने वाले शासक थे। साम्राज्य विस्तार से पहले उन्होंने मेवाड़ राज्य की आन्तरिक स्थिति को सुदृढ़ कर लिया। कर्मचन्द पंवार जो उनका विश्वस्त सामंत था उसे महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व के साथ अजमेर के परगने का भार सौंपा। अन्य सामन्तों को भी महत्त्वपूर्ण जिम्मेवारियाँ देकर आन्तरिक असंतोष समाप्त कर दिया। पड़ौसी राजपूत राज्यों से सिरोही बागड़, ईडर से मित्रता स्थापित कर ली। मारवाड़ में राव गांगा का शासन था उसके पुत्र मालदेव ने खानवा के युद्ध में सांगा की तरफ से भाग लिया था इसी प्रकार बीकानेर में लूणकरण राठौड़ का शासन था। ये भी राणा सांगा के साथ थे। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि राणा सांगा ने राजपूताना के सारे राजाओं से मजबूत मैत्री सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे। राजस्थान में कहीं भी राणा सांगा के प्रति असंतोष के भाव नहीं थे। ईस्वी सन् 1509 से 1517 तक राणा सांगा ने अपनी स्थिति काफी सुदृढ़ कर ली थी। अब उसने पड़ौसी मुस्लिम रियासतों की तरफ ध्यान दिया तथा अपने युद्ध कौशल और कूटनीति से तीनों मुस्लिम रियासतों को पराजित किया।

खातोली का युद्ध :– सन् 1517 ई. जिस समय राणा सांगा राज सिंहासन पर बैठा था उस समय दिल्ली सल्तनत पर लोदी वंश का शासन था। सिकन्दर लोदी दिल्ली का सुल्तान था जो अयोग्य और कमजोर शासक था। इस स्थिति का

फायदा उठाते हुए राणा सांगा ने आक्रमण कर मेवात क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। सिकन्दर लोदी राणा सांगा का प्रतिरोध नहीं कर सका। उसकी मृत्यु पश्चात् इब्राहीम लोदी दिल्ली का सुल्तान बना जो बड़ा महत्त्वाकांक्षी था। उसने मेवात क्षेत्र को पुन: प्राप्त करने के लिए राणा सांगा से युद्ध करने का निश्चय किया तथा सेना सहित खातोली की तरफ आगे बढ़ा। राणा सांगा को जब इब्राहीम लोदी की गतिविधियों का पता चला तो वो भी एक विशाल सेना लेकर खातोली की तरफ आगे बढ़ा। 1517 ई. को खातोली के मैदान में दोनों सेनाओं के मध्य भयंकर युद्ध हुआ जिसमें राणा सांगा की विजय हुई। इस युद्ध में राणा सांगा गंभीर रूप से घायल हो गये। उनका एक हाथ एवं एक पैर जख्मी हो गया और शरीर पर अनेक घाव लग गये।

बाड़ी का युद्ध 1518– खातोली के युद्ध में पराजित होने पर भी इब्राहीम लोदी चुप नहीं बैठा तथा कुछ समय पश्चात् एक विशाल सेना लेकर राणा सांगा से युद्ध का निश्चय कर धौलपुर की तरफ आगे बढ़ा। राणा सांगा भी सेना लेकर इब्राहीम लोदी का सामना करने आगे बढ़ा। धौलपुर के बाड़ी क्षेत्र में दोनों के बीच 1518 ई. में फिर घमासान युद्ध हुआ। राणा सांगा की विजय हुई तथा बयाना, रणथम्भौर, ग्वालियर क्षेत्र पर उनका अधिकार हो गया।

गागरोन का युद्ध 1519– राणा सांगा के समय मालवा का शासक नसीरुद्दीन खिलजी था। चंदेरी का मेदिनी राय उस समय मालवा में बड़ा प्रभावशाली था। 1511 ई. में नसीरुद्दीन की मृत्यु हो जाती है तथा मेदिनीराय के सहयोग से महमूद द्वितीय मालवा का शासक बन जाता है। महमूद खिलजी द्वितीय एक महत्त्वाकांक्षी शासक था। मेदिनीराय का प्रभुत्व उसे अखरने लगा। अपने दरबारियों के सहयोग से उसने मेदिनीराय के प्रभुत्व को कम करने का प्रयास किया, पर मेदिनीराय के प्रतिरोध से उसे भाग कर गुजरात जाना पड़ा। गुजरात के सुल्तान से सहयोग लेकर उसने मेदिनीराय पर आक्रमण कर दिया। मेदिनीराय मालवा छोड़कर राणा सांगा के पास मेवाड़ आ गये। राणा सांगा गागरोन (झालावाड़) का किला मेदिनीराय को देते हैं साथ ही चंदेरी पर भी मेदिनीराय का प्रभुत्व स्थापित करवा देते हैं। गागरोन का किला मेवाड़-मालवा की सीमा पर स्थित था तथा दोनों राज्य उस पर अपना अधिकार मानते थे। कभी गागरोन मालवा के अधिकार क्षेत्र में आ जाता था तो कभी मेवाड़ के शासक उस पर अधिकार कर लेते थे। जब राणा सांगा ने गागरोन का किला मेदिनीराय को सौंप दिया तो अवसर पाकर महमूद द्वितीय गागरोन पर आक्रमण कर देता है। राणा सांगा सेना सहित मेदिनीराय की सहायता के लिए पहुँच जाते हैं। महमूद द्वितीय युद्ध में परास्त हो जाता है और गिरफ्तार कर लिया जाता है। उसे पकड़ने वाले सेना नायक हरिदास चारण को राणा सांगा 12 गाँव उपहार स्वरूप देते हैं। महमूद द्वितीय तीन महिने तक मेवाड़ में कैद रहता है इस दौरान उसके घावों का उपचार किया गया तत्पश्चात उसे क्षमा कर मालवा का कुछ भाग प्रदान कर दिया। पर महमूद द्वितीय अहसान फरामोश निकला। जब राणा सांगा गुजरात राज्य से युद्ध कर रहे थे तो महमूद खिलजी द्वितीय ने गुजरात का साथ दिया था।

ईडर का युद्ध 1520– ईडर में राठौड़ राजवंश की रियासत की स्थापना राव सिहोजी के पौत्र द्वारा की गई थी। राणा सांगा के शासनकाल में ईडर राज्य के उत्तराधिकार के लिए दो चचेरे भाइयों रायमल तथा भारमल के बीच संघर्ष चल रहा था। भारमल ने गुजरात के शासक मुज्जफरशाह के सहयोग से ईडर पर अधिकार कर लिया उधर रायमल जो राणा सांगा के परिवार का रिश्तेदार भी था, सहायता लेने के लिए मेवाड़ पहुँच गया। उसी समय एक चारण कवि भी मेवाड़ पहुँचा, जो गुजरात से आया था। गुजरात के दरबार में राणा सांगा के बारे में अपमानजनक बातें कही तथा चारण कवि का भी अपमान किया। जब ये बातें चारण कवि ने राणा सांगा के दरबार में बताई तो राणा सांगा ने रायमल की सहायतार्थ ईडर पर आक्रमण का निश्चय किया गया 1520

ई. में ससैन्य मेवाड़ से प्रस्थान किया। उधर मुज्जफर शाह भी सेना सहित आता है, उसकी सहायता के लिये मालवा का शासक महमूद द्वितीय भी आता है पर दोनों की सम्मिलित सेना को ईडर के युद्ध में 1520 ई. में राणा सांगा परास्त कर देता है। रायमल को ईडर का राज्य सौंप कर गुजरात के अन्य क्षेत्रों पर आक्रमण कर उन्हें परास्त कर देता है। अहमदनगर के निजाम पर भी विजय प्राप्त कर हर्जाना वसूल कर राणा सांगा मेवाड़ वापस लौट आते हैं। 1525 तक **पश्चिमोत्तर भारत की राजनैतिक स्थित तथा राणा सांगा–** राणा सांगा ने तीन प्रमुख मुस्लिम राज्यों दिल्ली, मालवा तथा गुजरात को युद्धों में परास्त कर उन्हें शक्तिहीन बना दिया था। अब इन राज्यों में इतना साहस नहीं था कि वे राणा सांगा से युद्ध कर सकें।

पश्चिमी राजस्थान में मारवाड़ तथा बीकानेर के दो राज्यों का उदय हो रहा था। राणा सांगा के समकालीन जोधपुर (मारवाड़) के शासक राव गांगा थे, जिनके साथ मैत्रीपूर्ण संबंध थे तथा खानवा के युद्ध में जोधपुर की सेना ने मालदेव के नेतृत्व में राणा सांगा का साथ दिया था। बीकानेर में राव लूणकरण का शासन था उनके साथ राणा सांगा ने वैवाहिक संबंध स्थापित कर मधुर संबंध बना लिये थे। राणा सांगा ने बीकानेर राज्य के विस्तार में सहयोग कर उसे सिरसा (हरियाणा) तक फैला दिया था।

बूंदी, डूंगरपुर, बांसवाड़ा सीधे तौर पर मेवाड़ राज्य का हिस्सा थे।

आमेर के राजा पृथ्वीराज मेवाड़ के सामन्त थे।

राणा सांगा के समय मेवाड़ की सीमाओं का विस्तार दक्षिण में अहमदनगर ईडर, बांधवगढ़ तक विस्तरित था। इसी प्रकार पूर्वोत्तर में आगरा तक सीमा विस्तार था। 1525 तक मेवाड़ का राजनैतिक परिदृश्य अपने चरमोत्कर्ष पर था।

राणा सांगा तथा बाबर के मध्य संघर्ष– बाबर मध्य एशिया में फरगना का शासक था। उजबेकों से हार कर वह काबुल आ गया था उसी समय दिल्ली शासक इब्राहीम लोदी से नाराज होकर उसके चाचा दौलत खाँ लोदी बाबर के पास आया तथा उसे भारत पर (दिल्ली) आक्रमण का न्यौता दिया। साथ ही सैन्य सहायता का वादा भी किया। बाबर की स्थिति भी अच्छी नहीं थी। एक तो वो अपने पैतृक राज्य समरकन्द फरगान पर अधिकार करना चाहता था, पर सैनिक स्थिति कमजोर थी दूसरा भारत पर आक्रमण कर अपना राज्य स्थापित करना चाहता था। दौलत खाँ लोदी के सम्पर्क करने पर उसने भारत पर आक्रमण का निश्चय किया तथा दिल्ली की ओर बढने लगा। इब्राहीम लोदी को जब बाबर के अभियान के बारे में पता चला तो वो भी सेना लेकर बाबर की तरफ आगे बढ़ा तथा पानीपत के मैदान में दोनों के बीच 21 अप्रेल, 1526 ई. को युद्ध हुआ जिसमें बाबर की विजय हुई और आगे बढ़कर उसने दिल्ली पर अधिकार कर लिया।

बाबर के भारत पर इस आक्रमण के बारे में कुछ इतिहासकारों का मानना है कि इस आक्रमण के लिए राणा सांगा ने निमंत्रण दिया था। पर इतिहासकारों का यह कथन पूर्णतया निराधार है। हम ऐतिहासिक घटनाक्रम को देखें तो राणा सांगा ने खातोली एवं बाड़ी के दो युद्धों में इब्राहीम लोदी को बुरी तरह से परास्त किया था। इसके अलावा राजस्थान के सभी राजाओं का समर्थन प्राप्त कर एक विशाल सेना का गठन कर लिया था। ये राजा विभिन्न युद्धों में राणा सांगा का सहयोग भी कर चुके थे। इसके अलावा बाबर ने भी अपनी आत्मकथा तजुके बाबरी (बाबरनामा) में इसका कोई उल्लेख नहीं किया था। इतिहासकारों का यह प्रयास राजपूतों से द्वेष तथा राणा सांगा की छवि धूमिल करने का उपक्रम मात्र है। जिसमें कोई सच्चाई नहीं है।

बयाना का युद्ध– 16 फरवरी, 1527 पानीपत के युद्ध में विजय के पश्चात बाबर आगरा की ओर बढते हुए बयाना पहुँचता है। यहाँ राणा सांगा ने इब्राहिम लोदी को हरा कर अपना अधिकार कर रखा था तथा एक मुस्लिम निजाम खाँ को किलेदार नियुक्त कर रखा था। जब बाबर की सेना बयाना

की तरफ बढ रही थी तब निजाम खाँ ने दोहरी चाल चली। एक तरफ तो उसने राणा सांगा को बाबर के आगमन की सूचना दे दी दूसरी तरफ बाबर से भी संधि वार्ता शुरू कर दी। सांगा की सेना के आने में देरी हो रही थी ऐसे में निजाम खाँ ने किला बाबर को सौंप दिया। बाबर ने बयाना का किलेदार अपने बहनोई मेंहदी ख्वाजा को बना दिया तथा निजाम खाँ को दो-आब में एक जागीर देकर वहाँ से दूर हटा दिया।

राणा सांगा की सेना जब तक बयाना पहुँची वहाँ कि स्थिति बदल चुकी थी। बयाना बाबर के आधीन हो चुका था ऐसे में सांगा ने बयाना दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। मेंहदी ख्वाजा के नेतृत्व में मुगलों ने बयाना के दुर्ग को बचाने का भरसक प्रयास किया, पर अन्तत: 16 फरवरी 1527 ई. के दिन राणा सांगा का बयाना के दुर्ग पर अधिकार हो गया। मुगल सेना भाग कर चली जाती है।

खानवा युद्ध 17 मार्च, 1527- बयाना के युद्ध में हार कर भागती हुई मुगल सेना का मेवाड़ी सेना पीछा नहीं करती। लेकिन राणा सांगा यह जानते थे कि बाबर चुप नहीं बैठेगा अत: राणा ने अपने सभी सहयोगी राजाओं से मंत्रणा की। **पाती-परवण** की रीति के अनुसार सभी राजाओं, सामन्तों व सहयोगियों ने अपनी-अपनी सेनाएँ राणा सांगा के सहयोग के लिए भेजी। इनमें- आमेर का पृथ्वीराज कच्छावा, बीकानेर का भारमल, सिरोही का अखैराज देवड़ा, चंदेरी का मेदिनीरराय, वागड़ का उदयसिंह, सादड़ी का झाला अज्जा, सलूम्बर का रतनसिंह चूण्डावत और अनेक सामन्त अपनी-अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ थे। इसके अलावा हसन खाँ मेवाती तथा महमूद खाँ लोदी अपने 12 हजार सैनिकों के साथ राणा सांगा के पक्ष में बाबर से युद्ध करने आया था। उधर फतेहपुर सीकरी में बाबर युद्ध की तैयारियों में व्यस्त था। मुगल सेना में पूरी तरह निराशा छाई हुई। इसके कई कारण रहे यथा- 1. बयाना से हार कर आई सेना ने राणा सांगा की वीरता व विशाल सेना का ऐसा जिक्र किया कि मुगल सेना में हताशा छा गई। 2. काबुल से आये नजूमी (भविष्यवक्ता) मोहम्मद शरीफ ने बताया कि आगामी समय मुगल सेना के लिये बहुत खराब है। युद्ध न किया जाये। 3. बयाना की हार से सेना का मनोबल समाप्त हो चुका था।

इन सभी कारण से बाबर की सेना युद्ध के लिए तैयार नहीं थी तथा वापस काबुल जाकर, युद्ध की बात की जा रही थी। इस बीच बाबर राणा सांगा से संधि की बात चलाकर युद्ध तैयारियाँ करने में लगा हुआ था। सैनिकों का मनोबल बढाने के लिये उसने कुरान की कसम खाई अपने शराब के कीमती प्याले फोड़ दिये, शराब न पीने का वादा किया। सैनिकों का वेतन दुगुना कर दिया, इस पर भी सेना हताश ही नजर आई तो बाबर ने जिहाद का नारा देकर सेना को युद्ध के लिए तैयार किया।

बाबर ने सैनिक व्यूह रचना के अन्तर्गत सेना के आगे लम्बी-चौड़ी खाई खुदवाई, उसके पीछे 700 तोपें जंजीरों से बांध कर लगा दी। बीच के खाली स्थान को गाड़ियों से भर दिया। तोप खाने का दायित्व उस्ताद अली तथा मुस्तफा रूमी को दिया, जो तोपखाना संचालन में बड़े कुशल थे। सेना का कई भागों में विभाजित कर उनका दायित्व योग्य सेनापतियों को दिया तथा स्वयं बाबर सेना के पार्श्व (पीछे) भाग में रहकर सेना का संचालन करने लगा।

उधर राणा सांगा के पास एक विशाल सेना थी जिसका संचालन स्वयं राणा सांगा एक हाथी पर बैठकर कर रहा था। अनेकों राजा और सामन्त सेना के साथ राणा सांगा को सहयोग कर रहे थे। बयाना की विजय से सेना का उत्साह सातवें आसमान पर था। 17 मार्च, 1527 ठीक 9.30 बजे राणा सांगा की सेना के वाम पार्श्व (बांया भाग) ने बाबर की सेना के दक्षिण पार्श्व (दांया भाग) पर जोरदार आक्रमण कर दिया। बाबर के तोप खाने की परवाह न करते हुए, राणा सांगा के सैनिक लगातार आगे बढ़ रहे थे। ऐसा लगता था कुछ ही समय में राणा सांगा की विजय होने वाली है। इसी समय बाबर ने अपने एक सेनापति चिन तिमूर को जो मध्य हरावल में

तैनात था, आदेश दिया कि वह दक्षिण पार्श्व की सेना की सहायता के लिये आगे बढ़े। चिन-तिमूर ही सहायता से दक्षिणी भाग की सेना का उत्साह बढ़ गया व हारा हुआ युद्ध बराबर की स्थिति में आ गया। इसी समय राणा सांगा के आदेश पर सेना के बायें भाग ने बाबर की सेना के दक्षिणी भाग पर आक्रमण कर दिया। दोनों तरफ से घनघोर युद्ध शुरू हो गया। राणा सांगा की सेना तलवारों एवं भालों से साहस पूर्वक तोपों का मुकाबला कर रही थी। राणा सांगा सैनिकों का उत्साह बढ़ाने के लिये धीरे-धीरे सेना के अग्र भाग में पहुँच गये। बाबर के चुनिंदा धनुर्धरों ने राणा सांगा पर तीरों की बौछार कर दी ऐसे में एक तीर राणा के सिर में लगा और वे मूर्छित हो गये। राणा सांगा को हाथी से नीचे उतार कर एक सुरक्षित स्थान बसवा ले गये। उधर सेना को निराशा से बचाने के लिए झाला अज्जा को राज चिह्न धारण कराकर हाथी पर बैठा दिया। आग उगलती तोपों के कारण सांगा की सेना तत्परता से मुकाबला नहीं कर पाई और राणा सांगा की पराजय हो गई।

खानवा युद्ध पश्चात् राणा सांगा का जीवन- राणा सांगा को सामन्त बसवा ले गये थे। कुछ समय उपरान्त राणा को होश आया। उन्होंने सामन्तों से युद्ध का हाल पूछा तो उन्हें बताया गया कि घायल होने पर आपको युद्ध क्षेत्र से हटाकर यहाँ ले आये थे तथा हमारी पराजय हो चुकी है। राणा सांगा जो आज तक कोई युद्ध हारे नहीं थे, इस समाचार से हताश हो गये। सामन्तों ने राणा सांगा को सलाह दी कि चित्तौड़ लौट चलते हैं। सेना का पुन: संगठन कर बाबर से युद्ध करेंगे। राणा सांगा क्रोधित होकर बोले आज तक मैं जीत कर ही चित्तौड़ गया हूँ। हार कर किस मुँह से चित्तौड़ जाऊँगा। राणा सांगा को पता चला कि बाबर अब चंदेरी पर आक्रमण करने जा रहा है तो राणा सांगा ने सामन्तों को आदेश दिया कि चन्देरी के मेदिनीराय की सहायता के लिये प्रस्थान करो। अधिकांश सामन्तों का मत था कि सभी सैनिक घायल अवस्था में हैं ऐसे में युद्ध से कुछ समय के लिए बचना चाहिये पर राणा सांगा की जिद के कारण सेना चंदेरी की ओर बढने लगी। राणा सांगा सेना सहित बहराइच पहुँचे। यहीं पर सामन्तों ने उन्हें जहर-युक्त भोजन खिला दिया। उनकी तबियत बिगड़ गई फिर भी वे आगे बढ़ते रहे। 30 जनवरी, 1528 ई. को मेवाड़ के महान सम्राट हिन्दू-पत राणा सांगा की कालपी में मृत्यु हो गई।

खानवा युद्ध में राणा सांगा की हार के कारण- खानवा के युद्ध में राणा सांगा की हार के इतिहासकार अलग-अलग कारण बताते हैं। निश्चित रूप से उनके विचारों में न्यूनाधिक सत्य नजर आता है कुछ कारण जो बताये गये हैं-

- राणा सांगा की सेना विशाल तो थी पर असंगठित थी।
- राणा सांगा द्वारा परम्परागत युद्ध पद्धति अपनाना।
- बाबर को तैयारी के लिए एक महिने का समय दे देना। बयाना युद्ध (17 फरवरी) के पश्चात् राणा सांगा ने तुरन्त बाबर पर आक्रमण नहीं किया।
- बाबर के पास तोपखाना व घुड़सवार सेना।
- राणा सांगा द्वारा सेना के अग्र भाग में आकर सेना का संचालन करना।

उपरोक्त कारणों का विश्लेषण किया जाये तो राणा सांगा की पराजय का मुख्य कारण बाबर के पास 700 तोपों का विशाल तोप खाना था। राणा सांगा की सेना के पास परम्परागत हथियार, तलवार एवं भाले थे। निश्चित रूप से आग उगलती तोपों का मुकाबला इन हथियारों से नहीं किया जा सकता था। फिर भी जिस साहस, वीरता एवं अदम्य उत्साह से राणा सांगा की सेना ने युद्ध लड़ा वह प्रशंसनीय है। मेरे विचार से यदि बाबर के पास तोप खाना नहीं होता तो बाबर राणा सांगा से युद्ध करने का विचार तक नहीं करता। बाबर ने खानवा के युद्ध में बन्दूकों एवं तोपों के सामने राजपूतों की परम्परागत हथियारों (तलवार-भाले) से निडरतापूर्वक लड़ते हुए देखा तो आश्चर्य चकित रह गया। अपनी आत्मकथा तुजुके बाबरी में बाबर स्वयं लिखता है-

''राजपूत एक बहादुर कौम है, वह मरना जानते हैं पर लड़ना नहीं जानते, राजपूत जैसी कौम का साथ मुझे मिल जाये तो मैं पूरे संसार को जीत सकता हूँ।''

महाराणा सांगा का मूल्यांकन– मेवाड़ नरेश महाराणा सांगा भारतीय इतिहास के एक महान शासक थे। समकालीन शासकों में कोई भी राजा, महाराणा सांगा की बराबरी करने में सक्षम नहीं था। इनका मूल्यांकन हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर कर सकते हैं –

1. महान प्रतापी सम्राट– महाराणा सांगा के शासनकाल में मेवाड़ का ऐश्वर्य चरम शिखर पर था। राजपूतानें के सभी शासक–सामन्त राणा सांगा के नेतृत्व को स्वीकार करते थे। दिल्ली, मालवा तथा गुजरात के मुस्लिम शासक युद्धों में राणा सांगा से हार चुके थे।

2. महान विजेता– महाराणा सांगा ने अपने 19 वर्ष के शासनकाल में 19 बड़े युद्ध लड़े जिसमें खानवा के युद्ध के अलावा सभी युद्धों में विजय प्राप्त की थी। दिल्ली के सुल्तान इब्राहीम लोदी को खातोली एवं बाड़ी के दो युद्धों में परास्त कर उसकी शक्ति को क्षीण कर दिया था। इसी प्रकार मालवा के शासक महमूद द्वितीय को गागरोन में परास्त कर बन्दी बना लिया था। गुजरात का शासक मुज्जफर शाह भी राणा सांगा से परास्त हो चुका था। इन्हीं विजयों के कारण राणा सांगा का प्रभाव समस्त उत्तर भारत में फैल गया था।

3. महान पराक्रमी एवं साहसी शासक– महाराणा सांगा महान विजेता ही नहीं बल्कि व्यक्तिगत रूप से भी पराक्रमी एवं साहसी थे। इसी कारण उनके शरीर पर 80 घाव लग गये थे। युद्ध में एक आँख, एक हाथ व एक पैर भी गंवा चुके थे। इस पर भी उनका उत्साह कम नहीं हुआ था। युद्धों का नेतृत्व वे अग्रिम पंक्ति में रहकर ही करते थे। खानवा के युद्ध में भी तोपों के गोलों का मुकाबला करने के लिये हाथी पर बैठकर सेना का नेतृत्व कर रहे थे। उनका पराक्रम व साहस भारतीय इतिहास में अविस्मरणीय रहेगा।

4. कुशल संगठन कर्ता– राणा सांगा ने अपनी शक्ति एवं प्रभाव का विस्तार केवल युद्धों द्वारा ही नहीं किया था बल्कि पड़ौसी राजाओं से मैत्री पूर्ण संबंध बनाकर भी एक ऐसा संगठन बना लिया था कि संकट के समय वे राणा सांगा के साथ प्राण–पण से तैयार रहते थे। इसका उदाहरण है खानवा का युद्ध। जिसमें राणा सांगा के नेतृत्व में 7 राजा, 9 राव एवं 104 सामन्तों ने युद्ध में भाग लिया था।

शरणागत वत्सल शासक– राणा सांगा ने शरण में आये हुए संकटग्रस्त शासकों की भरपूर सहायता की थी। मेदिनीराय मालवा का एक प्रभावशाली सामन्त व चंदेरी का शासक था। उसके प्रभाव को मालवा के शासक महमूद खिलजी द्वितीय ने कम करना चाहा तथा गुजरात के मुज्जफर शाह से मिलकर मेदिनीराय से संघर्ष किया तथा चंदेरी से उसे भगा दिया तो मेदिनीराय राणा सांगा की शरण में आ गया। राणा सांगा ने उसे गागरोन का किलेदार बना दिया व चंदेरी का राज्य भी वापिस दिलवा दिया। इसी प्रकार ईडर का राज्य भी शरण में आये रायमल को दिलवाया। मालवा का सुल्तान भी युद्ध में हार कर पकड़ा गया तो राणा सांगा ने महिनों मेवाड़ में उसका इलाज करवाकर उसे क्षमा कर दिया।

धर्म सहिष्णु शासक– महाराणा सांगा सभी धर्मों का आदर करते थे। धार्मिक विद्वेष से कभी भी उन्होंने युद्ध नहीं किये। दिल्ली, मालवा एवं गुजरात के मुस्लिम शासकों से धार्मिक आधार पर कभी लड़ाई नहीं करी। इसी कारण खानवा के युद्ध में हसन खाँ मेवाती के नेतृत्व में 15,000 मुस्लिम सैनिकों ने राणा सांगा का साथ दिया था।

मूल्यांकन के उपरोक्त बिन्दुओं से स्पष्ट होता है कि राणा सांगा का व्यक्तित्व प्रभावशाली था। इतिहास में उन्हें भारत के महान शासकों में गिना जाता रहेगा। मेवाड़ इतिहास के दो महान शासकों महाराणा कुम्भा एवं महाराणा प्रताप के बीच इनका शासनकाल आने के कारण इनकी कीर्ति का पर्याप्त मूल्यांकन नहीं हो सका। फिर भी राणा सांगा भारतीय इतिहास के एक महान शासक के रूप में गिने जाते रहेंगे। ●

जरूरत व कामना

– गजेन्द्र सिंह आऊ

हम जरूरत व कामना को एक मान लेते हैं लेकिन दोनों में बहुत अन्तर है। जरूरत कभी बन्धनकारी नहीं होती परन्तु कामनाएँ बाँधती हैं। जो जीवन भर जरूरत मात्र पर निर्भर है उसका मोक्ष मार्ग स्वत: ही खुला हुआ है और जो कामनाएँ पूर्ण करने में लगा रहता है वह इस संसार सागर (भव सागर) में बन्धता ही जाता है। जरूरत पूरी हो सकती है, कामना नहीं।

जो अपने आपको साधक समझता है या संघ की साधना में रत है उसे जरूरत व कामना को बहुत बारीकी से समझना होगा व उस पर चलने का अभ्यास करना चाहिए।

शरीर को व परिवार को चलाने के लिए भोजन, जल, शुद्ध वायु, आवास, कपड़ा व वाहन की जरूरत होती ही है। इनकी पूर्ति के लिए धन कमाना, चिन्ता (जिम्मेवारी) करना व प्रबन्ध करना उचित भी है व अनिवार्य भी। पूर्ति के लिए खेती, व्यापार, नौकरी, राजनीति करना कभी भी बन्धनकारी नहीं है व ये कर्म हमें इस भव सागर के बन्धन में नहीं डालते। इसी में यह कामना करना कि भोजन तो चाहिए लेकिन ऐसा स्वाद हो, ऐसी होटल का हो, इतनी मात्रा व ऐसी वैरायटी का हो, पंच पकवान या छप्पन भोग हो, वर्षों की व्यवस्था भी हो, इस प्रकार का चिन्तन बन्धनकारी बन जाता है।

इसी प्रकार कपड़े का कार्य है शरीर को ढ़कना व सर्दी–गर्मी से बचाव करना। जो साफ सुथरा व साधारण हो लेकिन यह जरूरत जब कामना का रूप धारण करती है तब कपड़ा ऐसे रंग का, इस डिजाइन का, इस कम्पनी व कीमती हो यह सोच ही हमें कामनाओं में उलझा कर संसार से बान्ध लेती है।

आवास हमारी हर प्रकार की ऋतुओं से बचाव करता है। वह हमारे परिवार के रहने की जरूरत को पूरा करे। परन्तु कामनाएँ अपना जोर मारती हैं व जरूरत को नजरअंदाज करते हुए कहती हैं मकान नहीं बंगला चाहिए। जिसमें सब सुविधाएँ हों जैसे ए.सी., कूलर, गीजर, आधुनिक बाथरूम, डबल–बैड, डाइनिंग टेबिल, सोफा, मोडर्न कीचन, कीमती पर्दे, मार्बल का फर्श और इस प्रकार की अनेक कामनाएँ जो जरूरत नहीं रोब जाड़ने में सहायक बने।

आवागमन के लिए वाहन होना आज के युग में अनिवार्य सा हो गया है व जरूरत भी है। गाड़ी हो परन्तु बड़ी सी हो, सभी सुविधाओं से युक्त हो, लोगों को प्रभावित करने वाली हो ये कामनाएँ बन्धन में डालकर साधक को जीवन मरण के चक्कर में फंसा देती है। अत: जरूरत की वस्तुओं को इकट्ठा करना व उसका उपयोग करना किसी भी दृष्टि से बन्धनकारी नहीं है। इनकी पूर्ति करना अनिवार्य भी है। परन्तु कामनाएँ पूर्ण करने के लिए, अहंकार पूर्ण करने के लिए, लोकेषणा व रुतबे के लिए सब कुछ करना बन्धनकारी हो जाता है।

अत: मोक्ष व बन्धन का यही सुलझा हुआ मार्ग है। जरूरतें पूरी करते हुए अपने कर्तव्य मार्ग पर चलते जाना मोक्ष का मार्ग है व कामनाओं की पूर्ति करते रहना ही बन्धनकारी है। यही बार–बार जन्म मरण का कारण बन जाती है। इसलिए संघ के शिक्षण में व शिविरों में जरूरतों को कम करके साधारण जीवन यापन का अभ्यास करवाया जाता है। शिविरों में आनन्द ही इसलिए आता है कि न्यूनतम साधनों में जीवन जीते हैं। आनन्द ही परमात्मा का रूप है।

नौकरी व राजनीति भी सेवा के लिए हो व जो कुछ भी उचित धन मिल जाए जिसमें मेरी व मेरे परिवार की जरूरतें पूरी हो जाए तब तो यह भी पूजा बनकर कल्याण कर देती है परन्तु सेवा की जगह जब रुतबा व लोकेषणा ले लेती है तो बन्धन की फांसी बन जाते हैं। व्यापार भी ईमानदारी व पारदर्शी रूप से किया जाए तो वह भी पूजा बन जाता है। अलग से पूजा–पाठ या कर्मकाण्ड करने की भी आवश्यकता नहीं है।

यह प्रकृति हमारी ही नहीं 84 लाख योनियों की जरूरतें पूर्ण करने के लिए बाध्य है व अपने तरीके से कर भी देती है और कामनाएँ भी पूर्ण करती है लेकिन वे कामनाएँ इस जन्म में पूरी न हो तो अनेकों जन्मों में पूरी हो इसके लिए जन्म मरण का चक्र चलता ही रहता है। यही काम्य कर्म हैं। ●

धर्म एवम् क्षात्र धर्म

– अरिसालसिंह लोहरवाड़ा

धर्म का तात्पर्य धारण करने से है, धारयति इति धर्मः।

साधारण लौकिक अर्थ में धर्म का अर्थ नियम अथवा कानून भी मान सकते हैं।

एक क्षत्रिय के लिए जो धारण करने योग्य है तथा जिसकी पालना नियम, नीति सम्मत है, वह क्षात्र धर्म है। श्री गीताजी में क्षात्र धर्म की सात विशेषताओं का संकेत है। ''शौर्यं तेजा.....क्षात्रं कर्म स्वभावजम्'' में इन्हीं क्षात्र अवयवों का वर्णन है। ये सात अवयव अथवा गणक हैं-शौर्य, तेज, धैर्य, दक्षता (कुशलता), युद्ध (कार्य) विमुख न होना, दान (परहित) और ईश्वरीय भाव हैं। इन गणकों की अलग-अलग विद्वतापूर्ण व्याख्याएँ, विवेचनाएँ हैं जो मानव जीवन की सार्थकता की कुंजी है।

श्री रामायण जी में इसी विचार की महाकवि तुलसीदास जी महाराज ने सुन्दर विवेचना की है। रामायण के छठवें काण्ड-लंका काण्ड के 80वें दोहे में इस प्रकार से इनका वर्णन है।

रावण रथी बिरथ रघुवीरा। देखि विभीषण भयउ अधीरा।।
अधिक प्रीति उर (भा) संदेहा। बन्दि चरण कह सहित सनेहा।।
नाथ न रथ नहीं तन पद त्राना। केहि बिधि जीतब रिपु बलवाना।।
सुनहु सखा कह कृपा निधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य, सील दृढ़ ध्वजा पताका।।
बल, विवेक, दम, परहित घोरे। क्षमा, दया, समता रजु जोरे।।
ईश भजनु सारथी सुजाना। बिरति धर्म संतोष कृपाना।।
दान परसु, बुधि सक्ति प्रचंड। बर बिज्ञान कठिन कोदंडा।।
अमल अचल मन त्रोन सुमाता। सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद्य विप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।
सखा धर्म मय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके।।

-गीता में क्षात्र धर्म गम्भीर भाव से कहा गया है। रामायण में यही भाव सरल ग्राम्य भाषा में आख्यादित है। रामायण में उक्त दोहे में चौपाइयों के माध्यम से क्षात्रवृत्ति का सटीक संप्रेषण है।

युद्ध क्षेत्र में जब रावण एक अद्‌भुत रथ पर आरूढ होकर आया तब श्री विभीषण जी को संदेह हुआ और उन्होंने प्रभु श्री राम से कहा, हे नाथ आप बिना रथ, बिना तन-त्राण (कवच) पद त्राण (पगरखी) के इस वीर बलवान से कैसे पार (विजय) पाओगे।

प्रभु ने जो जवाब दिया वही क्षात्र धर्म के गणक है। उन्होंने कहा, हे सखे, शौर्य और धैर्य मेरे रथ के दो पहिये (चक्के) हैं तथा सुशीलता, सच्चाई और दृढ़ता इस रथ की ध्वजा (पहिचान) है। बल, विवेक, दम, परहित इसको गतिमान रखने वाले चार अश्व हैं, जिनको क्षमा, दया और साम्य भाव से नियंत्रित किया जाता है।

भगवान् का सदैव स्मरण एवं उन पर विश्वास एक बुद्धिमान सारथी का कार्य करता है तथा वैराग्य संतोषमय मन का सृजन करता है। दान परशु रूपी शस्त्र का कार्य करता है, बुद्धि शक्ति अस्त्र है तथा ज्ञान कठोर धनुष है। संयम नियम ही तीखे बाण हैं जिनका धनुष है अडिग एवं पवित्र मन। इसके ऊपर है गुरुजनों का सम्मान।

ऐसा रथ जिसके पास हो, वह इस संसार रूपी रावण को सहज ही जीत लेता है, इसमें संशय नहीं है। अर्थात् ऐसे गुण साधनों को जो सिद्ध कर लेता है, वह ही क्षात्रधर्म का पालन करने वाला हो सकता है।

श्री गीता एवं श्री रामायण में उल्लेखित क्षात्र धर्म सूत्रों को प्रथम तो ठीक समझ लेना ही एक चुनौती कार्य है। क्रियान्वित

करके कर्माचार में लाना बहुत कठिन लगभग दुसाध्य है क्योंकि पर उप देश कुशल बहुतेरे, जो आचरहि ते नर न घनेरे।

यह एक साधना है, उक्त अवयवों को अंगीकृत करने से मिल सकती है। इसके लिये सतत् अनवरत, नियमितता और निरन्तरता अपेक्षित है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ यही नियमितता एवं निरंतरतामय अभ्यास प्रणाली के माध्यम से सामूहिक संस्कार का लोक शिक्षण कार्य गत लगभग 78 वर्ष से करता आ रहा है। इस सामूहिक संस्कार सृजन कार्य को श्री क्षत्रिय युवक संघ एक सुविचारित, वैज्ञानिक आधारमय विधि से करता है। जिसमें लघु वय वाले बालकों को प्रथम पात्रता वाला माना जाता है। श्री क्षत्रिय युवक संघ, युवकों के सर्वांगीण विकास पर कार्य करता है। इस विकास में शारीरिक एवं बौद्धिक विकास के साथ-साथ नीति निमित्त चरित्र निर्माण को पहली वरीयता दी जाती है।

प्रात: सूर्योदय पूर्व प्रारम्भ से लेकर एक पहर रात्रि तक लगातार श्रम साध्य किन्तु कार्यक्रमों द्वारा युवकों को शारीरिक बल सौष्टवता, हेतु विभिन्न खेल, व्यायाम का अभ्यास, बौद्धिक जानकारियों का समावेश रखा जाता है। नियमितता एवं निरंतरता ही संस्कार निर्माण का अभ्यास है। प्रात: जागरण, निवृति कर्म, खेल, विचार गोष्ठियाँ, नैतिक शिक्षा, ईश्वर का ध्यान एवं उसकी शक्ति में विश्वास ऐसे उपाय हैं जो जीवन पथ को सुगम बना सकते हैं।

लेकिन लगातार साधनारत रहने का अभ्यास आसान नहीं है। यह मार्ग कांटों वाला, कठिन मार्ग है। क्रम छूट जाता है, छूटे हुए को पुन: प्राप्त करना और अधिक कष्ट साध्य है। यह मार्ग कृपाण की धार है, जहाँ जरा सी चूक/असावधानी काते हुए को कपास बना देती है। गन्तव्य तक का मार्ग बहुत लम्बा एवं बाधायुक्त है। इसे इस प्रकार समझें कि यदि शुद्ध, घृत की आवश्यकता हो और शुद्ध घृत की ही चाह हो तो, उसे किन-किन क्रियाकलापों में से निकलना होगा। स्वस्थ गाय जिसे पौष्टिक हरित से पाला गया हो, ईश कृपा प्राप्त ब्याँत से नैतिकता का दूध, निविकार उष्मित कर, धैर्य की पवन से जामन योग्य बना गया हो। उससे प्राप्त दही, फिर बिलौने से नवनीत। नवनीत को अग्नि पथ से विचरण कराके धृत प्राप्त हो सकेगा। और आश्चर्य यह कि इतनी कठिनता से बनाया गया शुद्ध घृत, कभी भी कुसंयोग पाकर उपयोग नष्ट करा लेता है। सारा श्रम जैसे Back to square one हो जाता है। साधना कठिन मार्ग है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ लगातार ऐसा अभ्यास कराता है। क्षात्रधर्म के सातों गुणों में से किसी एक गुण का शतांश भाव भी अगर जीवन में अवतरित हो जाए तो उस साधक का कल्याण निश्चित है जैसे नवधा भक्ति के नौ गुणों में किसी एक पर भी आचरण बन पड़े तो प्रर्याप्त भक्ति उपलब्ध हो सकती है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ की विचारधारा ने अनेकों अनेक लोगों के जीवन को काव्यमय बनाया है किन्तु यह तथ्य भी गौण नहीं किया जा सकता है कि जिन्हें वांछित फल प्राप्ति नहीं हुई, उन्हें एक संशयात्मिकता ने घेर लिया तथा पथ छूट गया। यह सच है, ऐसा होता है। बाधाएँ पग-पग खड़ी प्रतीक्षा करती हैं। बाधाओं से किसी प्रकार पीछा छुड़ा लिया जाये, तो भी क्षुद्रताएँ, लोभ, लालच, गन्तव्य मार्ग की यात्रा को धीमी कर देती है।

विगत वर्षों में अब तक हजारों हजार स्वयंसेवकों ने क्षत्रिय युवक संघ के पवित्र सरोवर के पुण्य सलिल का आचमन किया है किन्तु अधिकांश का मार्ग छूट गया होता है।

तो क्या यह समझें कि ऐसे लोगों का संघ में बिताया समय व्यर्थ का रहा? नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता है। संघ में आकर जिसने, जितना जाना, जितना समझा अथवा जितना अपनाया, वह उस साधक की निधि बन गया है, जिसने साधक को सामान्य में असामान्य जरूर बना दिया है और इस असामान्यता की शीतल, मंद, सुगंध, साधक को सदैव अनुप्राणित करेगी। अनुप्राणित जीवन परमानन्द से कम नहीं। ●

आत्मध्यान और मौन ही जीवन का सार है

– रश्मि रामदेरिया

''आध्यात्मिक साधनों की फलश्रुति है–अन्त:करण की पवित्रता। अत: मन, वचन और कर्म की पवित्रता ही भगवद् साक्षात्कार की आरम्भिक पात्रता है।''

आत्मध्यान–अध्यात्म का अर्थ है– अपने अस्तित्व की ओर कदम बढ़ाकर अपने आपको जानना। जब अध्यात्म की राह चलते हैं तो शोक, संशय, द्वंद्व नहीं रहेगा और प्रसन्नता, आनन्द, उल्लास, उत्सव–धर्मिता तथा जीवन में धन्यता और प्रेम व शान्ति का अनुभव होता है। **''संतोष ईश्वर–प्रदत्त संपदा है और तृष्णा अज्ञान के द्वारा थोपी गई निर्धनता''** बाहर की वस्तुओं में उसे खोजने की अपेक्षा अपनी दर्शन–दृष्टि का परिमार्जन होना चाहिये। आनन्द भीतर से उमड़ता है। आनंद की उपलब्धि केवल एक ही स्थान से होती है वह है आत्मभाव। अत: परिणाम में संतोष और कार्य में उत्कृष्टता का समावेश करके उसे कभी कहीं भी और कितने ही बड़े परिणाम में पाया जा सकता है। सत्संग करें, ध्यान करें, आध्यात्मिक चिंतन करें और जीवन की व्यवस्था को समझें। ये सब हमें अपने जीवन में आने वाले उतार–चढ़ाव में स्थिरता का बोध कराते हैं। मन में सकारात्मक और धैर्य उत्पन्न होता है, जो हमारे जीवन को उत्तम बना देता है और हमें जीवन में आगे बढ़ने का मार्ग दिखता है। इसलिए हमें परिस्थिति नहीं मन:स्थिति बदलनी चाहिए। अगर हम अपने चित्त पर नियंत्रण कर लें, तो वह सब कुछ पा सकते हैं इसलिए अपनी इच्छा और लालसा के मोहजाल से बाहर आना ही पड़ेगा। हमें वास्तविक आनन्द के मार्ग पर चलना होगा।

''आँसू बहा न बन्धु मेरी परम्परा शरमायेगी; कदम बढ़ा धरा तेरे बोझ से झुक जायेगी। पहचान तेरे रूप को कल्पना नई करें। सोचना शुरू करें।।'' आओ जरा से बैठकर चेतना नहीं भरें। सोचना शुरू करें शान्त मन रखकर हर पल ऐसे जियो जीवन का आखिरी पल है। हमेशा खुश रहें, वर्तमान में जियें। भगवान का उठते–सोते आभार Gratitude प्रकट करें। फूल की तरह खुशबू फैलाएँ। अपने विचारों, इन्द्रियों, शब्दों, क्रोध पर पूरा नियंत्रण रखें। किसी की निंदा ना करें, दिल बड़ा रखकर माफ करें क्योंकि सभी प्रभु के अंश हैं। हर दिन कुछ नया करें कुछ नया सीखें। आत्मचिंतन करें। प्रभु से सच्चे मन से प्रार्थना करें उनकी शरण में रहें सब कुछ उन्हें समर्पित कर दें। मांगे, हमें मार्गदर्शन करें। उनकी कृपा हमेशा बनी रहे। हमारे हाथ में तो साँस लेना भी नहीं है। अपनी आत्मा तक पहुँचना ईश्वर की उच्चतर शक्ति के पास पहुँचना होता है। स्वयं को समर्पण कर देना वास्तविकता को स्वीकार करना है। सभी सुखी हों, सभी प्रेम से रहें, सबका कल्याण हो। सेवाभावी बनें। जीवन से प्रेम करने का अर्थ है प्रभु से प्रेम करना। हे नाथ! हे प्रभु! मैं आपको भूलूं नहीं। हर पल यही स्मरण रहे। ''मस्त जिन्दगी में है नई हिलोर आई। अन्धकार को भगा प्रेम किरण आई।। नाच मन मयूर दिव्य सी छटा है छाई।'' हमारी सोच और दिनचर्या में ही छिपा है जीवन की हर सफलता का राज।

''कहाँ गई वह शक्ति तुम्हारी जिससे जग जय करना था।
भावों का सागर क्यों सूखा जीवन जिससे लहराता।।
यह रोना तो फिर रो लेना, आज हँसों हे जीवन दाता।
करो उपेक्षा भले काल की कौन काल से है बच पाता।।
कदम तुम्हारे काँप रहे क्यों नये युगों के निर्माता....''

यह सत्य है कि हम जैसा सोचते हैं, वैसा ही प्राप्त करते हैं। नकारात्मक सोच जहाँ हमें निराशावादिता और नाकामी की ओर ले जाती है, वहीं सकरात्मक विचार हमें सकारात्मकता और सफलता की ओर अग्रसर करते हैं।

(शेष पृष्ठ 24 पर)

राम और कृष्ण

– युधिष्ठिर

सबका काम इन्हीं के पीछे चल रहा है। ईश्वर के दो मुख्य अवतार इन्हें कहा जाता है। इनका प्रचार जोरों-सोरों से किया जा रहा है और प्रचार करने भी आगे वे आये जिन्हें अपना प्रचार करना था। इन प्राप्त पुरुषों की भाषा तो देखो बाप, बेटा, तू-तड़ाके से बात करेंगे। अरे इन्सान से ईर्षा करने वाले इंसान तू तो इंसान भी नहीं है। इस दुनिया का रहस्य बहुत सरल है पर जो दिमाग में बैठ गया उसी का प्रचार किया। इसमें सहयोग किया टेलिविजन ने। इन्होंने वही दिखाया जो इन्हें समझ आया और वही हमारे दिमाग में बैठ गया।

ईश्वर एक ऐसी शक्ति है जो सुचारू रूप से इस संसार का संचालन कर रही है। इसको समझने के लिए भगवान की व्यवस्था को समझना पड़ेगा। एक तो है कि भगवान करता है और दूसरी बात है भगवान की व्यवस्था काम करती है; दोनों ही जगह भगवान ही करता है। अगर इंसान अपने कर्मों का फल भोगता है तो यह ईश्वर की व्यवस्था है कि वह कर्मों का फल भोगेगा। अच्छा से अच्छा इंसान भोगेगा, बुरा से बुरा इंसान भोगेगा, संत-महात्मा भी भोगेगा। सबको भोगना ही पड़ता है, भोगे बगैर उतरता नहीं। उतरे बगैर जन्म-मृत्यु का पिंड छूटेगा नहीं। इसलिए आत्महत्या करने का कोई फायदा नहीं। दुखों से छूटने के लिए अपनी हत्या की, वो तो भोगना की पड़ेगा; साथ ही ईश्वर की व्यवस्था अनुसार ईश्वर प्राप्ति के लिए यह जीवन मिला तो प्राप्ति तो हुई नहीं, फिर इसी रस्ते से गुजरना पड़ेगा, ईश्वर की व्यवस्था तोड़ी वो अलग। इसलिए दुख मिटाने के लिए कोई ऐसा करता है, इससे दुख मिटता नहीं दुख और बढ़ जाता है। यह अपराध है, इससे इष्ट की नाराजगी ही हाथ लगती है। कोई अगर अत्यधिक दुखी है तो उसे यह तीन काम करने चाहिए- पहला, इस मंत्र को रटते रहना चाहिए ''सब ईश्वर करता है।'' दूसरा, जो ईश्वर का कार्य है, जिस कार्य को करते हुए ईश्वर ने प्रकट होकर संबल प्रदान किया वो कार्य करने चाहिए। तीसरा, ईश्वर के नाम का जप करते रहना चाहिए। इन सबसे कर्म कटते हैं और अगर भोगने में भी आते हैं तो बहुत अल्प भोगना पड़ता है।

ईश्वर की प्राप्ति मनुष्य जन्म में होती है बाकी सब तो भोग योनि है तो यह भी ईश्वर की व्यवस्था ही है। अब बहुत ढंग से समझना है, प्राप्ति और अप्राप्ति के बीच में क्या फर्क है। जिसमें प्राप्ति हो गई उसका दुबारा कोई जन्म नहीं होगा, मनुष्य जन्म भी नहीं होगा। तो राम और कृष्ण का जन्म कैसे हुआ? वे मनुष्य शरीरधारी थे। जिसने प्राप्ति कर ली वह मनुष्य शरीरधारी भी हो सकता है क्योंकि उसकी आयु के दिन अभी शेष हैं। जिसने प्राप्ति कर ली वह मनुष्य शरीरधारी हो सकता है, उसकी आयु के दिन शेष हैं किंतु क्या शरीर छूटने के बाद दुबारा उसका जन्म होगा? नहीं। इस दृष्टि से राम और कृष्ण तो अलग-अलग होने चाहिए, हम इन्हें एक विष्णु का अवतार भी कहते हैं।

यहाँ ईश्वर की व्यवस्था को समझना पड़ेगा। अवतार कभी मनुष्य के शरीर के रूप में होता ही नहीं। ईश्वर तो अजन्मा है फिर उसका जन्म कैसे हो सकता है। मनुष्य का शरीर तभी मिलता है जब कोई कमी शेष रह गई हो। प्राप्ति हो जाती तो जन्म होता भी नहीं। ईश्वर रूप तो कैसा भी बना सकता है पर गर्भ से जन्म तो मनुष्य का भी होता है। मनुष्य कौन? ईश्वर का अंश। तो राम और कृष्ण थे कौन? राम और कृष्ण ने प्रसिद्धि ज्यादा हासिल की। राम और कृष्ण महापुरुष थे। ऐसी कोई व्यवस्था नहीं कि कोई तारा कहीं से आया और यहाँ प्रकट हो गया और हो गया अवतार। तो क्या राम और कृष्ण भगवान नहीं थे? भगवान थे। यह विरोधाभास कैसे? यह दो बातें कैसे? इसके लिए भगवान को समझना पड़ेगा। भगवान कौन? इस सृष्टि का रचियता एक ही है।

हम चाहे कहीं बैठें, किसी भी रूप में पूजें, कैसे ही कपडे पहने, हम सबका ईश्वर, दुनिया के किसी भी कोने में रहने वाले इंसान का ईश्वर एक ही है। वह एक ही है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये तीनों तो अलग-अलग हो गए। जो इंसान ईश्वर की प्राप्ति कर लेता है वह ईश्वर से अलग नहीं रह जाता। अब जब कोई भेद नहीं, फर्क नहीं तो राम और कृष्ण भगवान ही हैं। वह था आखिरी जन्म जो राम के रूप में था। ऐसे बहुत से महापुरुष हैं जिन्होंने राम और कृष्ण की स्थिति पाई। राम और कृष्ण स्थिति है। कोई भी व्यक्ति उस स्थिति तक पहुँच सकता है। फिर उस व्यक्ति में, राम और कृष्ण में कोई फर्क नहीं। राम और कृष्ण वैकुण्ठ से आये हुए स्पेशल भगवान नहीं थे। बैकुण्ठ एक आध्यात्मिक शब्द है न कि कोई नगरी। बै यानि दो, जब वह कुण्ठित हो जाए, यानी भान खत्म हो जाए। अभी तो मैं अलग, भगवान अलग, जब यह भान खत्म हो जाए तो बैकुण्ठ में प्रवेश होता है।

भगवान कृष्ण ने कहा- ''मैं अजन्मा हूँ।'' लेकिन भगवान कृष्ण का तो जन्म हुआ था। वे एक मनुष्य शरीरधारी थे। भगवान कृष्ण के कहने का अर्थ है मैं ईश्वरों का ईश्वर हूँ, मेरा जन्म नहीं होता, यानी अब मेरा जन्म नहीं होगा। कृष्ण का जन्म हुआ लेकिन प्राप्ति हो गई, अब जन्म नहीं होगा।

भगवान राम और कृष्ण को विष्णु का अवतार कहा जाता है, विष्णु कौन? जिस लोक को हम जानते हैं ऐसे अनंत लोक हैं। हर लोक के अलग-अलग ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं। जो अपना कालखण्ड पूरा करके नष्ट हो जाते हैं। विधाता और विधाता से उत्पन्न सृष्टि नश्वर है, केवल परमात्मा नश्वर नहीं है। तो जो नश्वर है उसका अवतार राम और कृष्ण कैसे हो सकते हैं। दरअसल ईश्वर प्राप्ति से पूर्व काम करने वाली प्रशक्तियाँ हैं ब्रह्मा, विष्णु, महेश। यानी ईश्वर इनसे भी सर्वोपरी कोई और सत्ता है। आत्मा की जागृति और ईश्वर की प्राप्ति तक यह प्रशक्तियाँ काम करती हैं। यानी ब्रह्मा, विष्णु, महेश गुणधर्म है, ईश्वर के कार्य करने का तरीका है, ईश्वर की विभूतियाँ हैं न कि कोई ईश्वर। ईश्वर कोई इंसानों जैसा थोड़े ही दिखता है। बिना हाथों के वह सर्वत्र कार्य करता है; बिना पाँवों के वह कहीं भी आ जा सकता है। बिना आँखों के वह सब कुछ देख सकता है। संक्षेप में कहें तो उसके जैसा कोई नहीं। अब अपने अंदर झाँककर देखो क्या हम ईश्वर को इंसान की तरह दिखता है ऐसा समझ रहे थे या नहीं?

भगवान तो खुद कहते हैं जब-जब धर्म की हानि और अधर्म का विकास होता है मैं प्रकट होता हूँ। तो क्या मनुष्य के शरीर के रूप में अवतार लेते हैं। जिसका कोई रूप भी नहीं उसका कोई रूप कैसे हो सकता है। यह धर्म की हानि और अधर्म का विकास व्यक्ति से संबंधित है न कि लोगों से। व्यक्ति के अंदर भी यह हलचल होती है। उसे ही ग्लानि होती है, उसके ही अश्रु फूटते हैं। वह ही ईश्वर के लिए तड़फ उठता है। उसके भीतर ही अवतार होता है। अवतार भीतर होता है बाहर नहीं। तो कोई कैसे देख सकता है? शरीर तो सबको दिखता है। भगवान ने कहा मैं ईश्वरों का ईश्वर हूँ लेकिन हूँ मनुष्य शरीर वाला इसलिए लोग मुझे तुच्छ समझते हैं। स्पष्ट है मनुष्य शरीर में ही प्राप्ति सम्भव है।

अब प्रश्न उठता है शरीर अवतार क्यों नहीं हो सकता? शरीर का संबंध है कर्मों से। कर्मों की वजह से ही शरीर मिलता हैं और कर्मो की उपस्थिति तक शरीर बना रहता है। यह आत्मा जो ईश्वर का अंश है इसका संबंध शरीरों से तब तक ही है जब तक एक भी संस्कार जीवित है और यह भगवान की व्यवस्था है। और भगवान तो वह है जो संस्कारों से उपराम हो गया। अत: इस गफलत से बाहर निकलना जरूरी है।

अब बात आती है यह अवतार क्या है? अवतार होता है आत्मा की जागृति। जिसको कई नाम दिए गए हैं लेकिन वो यहाँ नहीं लिखा जा सकता क्योंकि भ्रम फैलता है। गुरु की आत्मा का हमारी आत्मा में उतरना अवतार है। कोई कैसे देख लेगा इसे। हाँ जो इस विद्यालय का विद्यार्थी हैं उसे पता चल जाएगा। ऐसे बहुत सारे पाखण्ड इसलिए फैल गए क्योंकि दुष्प्रचार बहुत फैल गया वे भी बताने लगे जिन्हें कुछ पता ही नहीं है।

आजकल धर्म का बड़ा बोल–बाला है। धर्म नष्ट हो जाता है। जिसको हम धर्म कहते हैं वह पूजा–पद्धत्तियाँ हैं। महापुरुष भ्रम मिटाने आये, जब उनकी बात समझ नहीं आई तो उन्हें ही भ्रम बना दिया। समाज टूटता गया। लोग कटाक्ष करते गए। एक दूसरे पर अँगुली उठाते गए। जो धर्म था ही नहीं उसके नाम पर अलग–अलग मत और सम्प्रदाय बनते गए। हमारी पूजन पद्धति अलग–अलग हो सकती है पर हम सबका धर्म एक ही है। धर्म है क्या? अपनी आत्मा और दूसरों की आत्मा को गर्त में जाने से बचाना ही धर्म है बाकी सब अधर्म है। अब हम देख लें हम धर्म के अनुयायी हैं या अधर्म के।

महापुरुष और सद्‌गुरु शब्द पीछे छूट रहे हैं। महापुरुष, सद्‌गुरु, भगवान, तीनों एक ही हैं कोई फर्क नहीं। जो मनुष्य शरीरधारी था उसने अपने आपको जान लिया वह महापुरुष है। ये जितने मंदिर बने हुए हैं वे समय–समय पर होने वाले महापुरुष हैं। राम–कृष्ण ज्यादा दूसरे कम ऐसा नहीं। सद्‌गुरु जो सत्य में स्थित है, जिसके बिना अवतार संभव नहीं, जो प्राप्ति तक हमारा मार्गदर्शक है, प्राप्ति के बाद हमसे अलग नहीं। भगवान में विलीन होने वाला जीव यानी दर्शन, स्पर्श और स्थिति जब प्राप्त हो जाती है तो उस जीव में और भगवान में कोई फर्क नहीं रह जाता। भगवान अपनी सारी विभूतियाँ प्रदान कर देते हैं। जो कुछ भगवान में है वो सब कुछ उसमें है। वह अपने आपको भगवान की दिव्यता से ओतप्रोत पाता है। वह भगवान ही हो गया। ईश्वर एक, प्राप्ति के बाद रहनी एक। ईश्वर सर्वकाल में सब जगह मौजूद है।

इसलिए भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं। हर बार के अलग–अलग देवता नहीं। हर दिन का अलग–अलग उपवास नहीं। इस दुनिया का एक ही सच है सब कुछ नष्ट हो जाएगा। देव, दानव, जड़, चेतन, विधाता, विधाता से उत्पन्न सृष्टि, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, चराचर जगत सब नश्वर है, सब आज हैं कल नहीं रहेंगे। हम नश्वर के उपासक बनते जा रहे हैं और जो नश्वर का उपासक है वह नष्ट हो जाएगा। केवल ईश्वर शाश्वत है, ईश्वर का भक्त शाश्वत है। वह कभी नष्ट नहीं होता। कोई नहीं जानता भगवान का जन्म कब हुआ? कोई नहीं जानता भगवान के माता–पिता कौन हैं? कोई नहीं जानता भगवान की आयु कितनी है।

भगवान के दर्शन कभी भी शरीर की आँखों से नहीं होते। प्राप्ति, दर्शन, शिक्षण सब अनुभव में होते हैं। जब भगवान के दर्शन इन आँखों से हो ही नहीं सकते तो हमने कैसे राम और कृष्ण को देख लिया। राम और कृष्ण तो मनुष्य शरीरधारी थे। इसलिए शरीर कभी भगवान नहीं होता। भगवान एक स्थिति हैं। उस स्थिति तक राम और कृष्ण पहुँचे इसलिए वे भगवान हैं न कि राम और कृष्ण का शरीर भगवान था। कुछ लोग राम और कृष्ण को विशेष श्रेणी में डाल देते हैं और इंसानों से अलग दर्शाते हैं। अगर वह अलग होते तो हमारा भविष्य नहीं होते। कुछ लोग राम और कृष्ण को बैकुण्ठ से आये हुए विशिष्ट भगवान बताते हैं, उसी रूप में पूजने लगे। पूजना तो गलत नहीं है हमें प्रेरणा मिलती है लेकिन जब भगवान की व्यवस्था समझ नहीं आती तो हम कई तरह के विरोधाभास पाल लेते हैं। विष्णु का अर्थ है विश्व में अणु के रूप में परमात्मा व्याप्त है न कि विष्णु कोई भगवान है जिनके अवतार राम और कृष्ण हैं। जो शंकाओं से अतीत है वह शिव है। शंका कब मिटती है जब व्यक्ति अपने आपको पहचान लेता है। ऐसे के ऐसे तीन मुँह वाले ब्रह्मा की भी कल्पना कर ली। आध्यात्मिक क्षेत्र में बुद्धि का उत्तरोतर विकास होता है वह है ब्रह्मा के तीन मुँह न कि तीन मुँह वाला ब्रह्मा कहीं है।

अगर भगवान कृष्ण को पुकारा गया तो भगवान कृष्ण प्रकट होंगे और ईशारा कर देंगे जीवित महापुरुष की ओर यानी जो शरीर रूप में है। आगे हमारा कल्याण उन्हीं महापुरुष से होगा। इसी तरह स्वर्ग और नरक कल्पना कर ली। प्राप्ति के बाद न स्वर्ग कोई विशेषता रखता है न ही नरक कोई हीन भावना क्योंकि सम की स्थिति आ जाती है। आकाश में कोई ऐसा स्थान नहीं जिसे स्वर्ग कहा गया। पाताल में कोई ऐसा

गड्ढा नहीं जिसे नरक कहा जाए। जिसे हम असुर कहते हैं उसके कोई सींग नहीं वह अपने कर्मों की वजह से ही नरक भोग रहा है। स्वर में विचरने की क्षमता स्वर्ग है यानी स्वर में नाम ढला हुआ मिले यानी श्वास में नाम ढला हुआ मिले। ऐसे बहुत से आडम्बरों ने जगह ले ली। होता यह है कि कोई आता है, रस्ता बताता है, लोग उस महापुरुष के बताए हुए रस्ते पर तो चलते नहीं और उसे ही पूजना शुरू कर देते हैं। और इसी तरह आडम्बर फैलता है लोग उसे भगवान मानने लगते हैं। पीछे की पूरी सच्चाई छुप जाती है और लोग पथभ्रष्ट हो जाते हैं और एक नई कुरीति जन्म ले लेती है।

इस पर भी काफी छींटाकशी है कि भगवान ने अर्जुन को कहा–अर्जुन तेरे और मेरे अनेक जन्म हो चुके हैं तुझे कुछ भी याद नहीं और मेरे से कुछ भी छिपा नहीं है। ऐसा कैसे ? प्राप्ति के बाद सब कुछ पता चल जाता है और यही तो कारण है कि भगवान कृष्ण कोई बैकुण्ठ से आये हुए विशिष्ट भगवान नहीं थे। एक जन्म में यज्ञ करते रहे, एक जन्म पुष्कर में निकला, ऐसे बहुत से जन्म हुए।

किसी भी भोग का परिणाम सुख नहीं है। कुछ भी करने का मन नहीं करता क्योंकि परिणाम पहले से ही पता है और यह भी पता है कि यह सच नहीं है।

पृष्ठ 20 का शेष

आत्मध्यान और मौन ही जीवन का सार है

''कठिनाईयाँ जीवन के लिए बहुत ही जरूरी होती हैं, सफलता का आनन्द इनके बिना उठाया नहीं जा सकता है। कठिनाइयों में ही सिद्धान्तों की परीक्षा होती है। मेहनत इतनी खामोशी से करो की कामयाबी शोर मचा दे, बस मेहनत करते जायें रुकें नहीं।''

हमारी दिनचर्या में स्वयं को हम ऐसे कार्य में लगाये, जिससे हमें मानसिक शान्ति मिले। हम मधुर संगीत, मौज-मस्ती, अच्छा साहित्य आदि के माध्यम से अपने तनाव को दूर कर सकते हैं। उदाहरण–

1. व्यर्थ की बहस से बचें, 2. हर रोज कुछ नया करें, 3. अच्छे लोगों से दोस्ती करें 4. सोच के दायरे को बढ़ाएं, 5. नियमित व्यायाम करें, 6. सात्विक आहार लें, 7. जीवन के मूल मंत्र को पहचानें, 8. स्वयं को समझें, निजता को पहचानें आदि।

''उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत। क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्ग पथ–स्तत्कवयो वदन्ति''

अर्थात् उठो, जागो और श्रेष्ठजनों के सान्निध्य में ज्ञान प्राप्त करो। अपने होने का अनुभव करें। विचार बदलने से दुनिया बदल जाती है।

''सफलता पर सुविचारों का अनमोल संग्रह''

"Success is no accident it's hard work, Preseverance, Learning, Studying, Sacrifice and most of all love of what you are doing or learning to do there are no secret to sucess.

हमारी सोच और दिनचर्या में ही छिपा है जीवन की हर सफलता का राज। योग मन के शान्त करने का अभ्यास है। दिन की शुरुआत अच्छे विचारों के साथ करें। जीवन ना तो भविष्य में है और ना ही अतीत में ही–जीवन तो केवल वर्तमान में है। प्रभु श्री कृष्ण का गीता सार हमेशा याद रखें– ''जो हुआ अच्छा हुआ, जो होगा अच्छा होगा, स्वयं को मुझ पर छोड़ दो अपने कर्म पर ध्यान दें कर्म स्वार्थ और पाप रहित हो।''

क्षत्रियों की सर्वश्रेष्ठ पूंजी-'चरित्र' वर्तमान दशा एवं दिशा

– राजेन्द्र सिंह राणीगाँव

हमारे धर्म शास्त्रों के अनुसार पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम कौर मोक्ष) प्रत्येक विवेकशील मानव का स्वाभाविक लक्ष्य होता है। इसमें भी धर्म का स्थान सर्वोपरि होता है। साधारण रूप से समझने के लिए धर्म वह है जो मानव कर्तव्य रूप में धारण करता है। यदि हम यह कहें कि व्यक्ति यदि अपने स्वाभाविक कर्तव्य का पालन पूर्ण क्षमता एवं मनोयोग से करता है तो वह धर्म पालक माना जाता है। भले ही कर्मकाण्ड करने में चूक कर्ता हो। जैसे कोई पुत्र- पुत्री अपने माता-पिता गुरुजनों की सेवा व आज्ञापालन में तत्पर है तो वह कर्म मन्दिर में पूजा के बिना भी भगवान की सेवा करने वाला माना जाता है। कोई सैनिक यदि मातृभूमि की रक्षार्थ अपने प्राणों का उत्सर्ग करता है तो वह स्वर्ग का अधिकारी है। कर्तव्य पालन की भावना उसी व्यक्ति में अधिक होती है जो चारित्रिक दृष्टि से श्रेष्ठ हो। यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव का विषय है कि कर्तव्य पालन की अनवरत परम्परा हमारे क्षत्रिय समाज में रही है। इस अखण्ड परम्परा का मूल समाज का ''चारित्रिक'' बल रहा है। चरित्र की रक्षा के लिए उत्कृष्ट अगणित व्यक्तिगत उदाहरण हमारे इतिहास में उपलब्ध हैं। कर्तव्य पालन एवं चरित्र रक्षार्थ सामूहिक रूप से किये गये जौहर (चित्तोड़गढ़, रणथम्भौर, जैसलमेर) एवं ''शाके'' भारतीय इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित हैं।

चरित्र की श्रेष्ठता के बावत हमारे धर्म शास्त्रों के निम्न श्लोक इसकी महत्ता को रेखांकित करते हैं –

विदेशेषु धनं विद्या, व्यसनेषु धनंयति।
परलोके धनं धर्मः, शीलं सर्वत्र बे धनम्।।

अर्थात्- विदेश में ''विद्या'' धन है, संकट में ''बुद्धि'' धन है, परलोक में धर्म धन है और ''अच्छा चरित्र'' सर्वत्र ही धन है।

वृतं यत्नेन संरक्षेद्, विन्तयेति च याति च।
अक्षीणों विन्ततः क्षीणो वृत्तहस्तु हतो हतः।।

(मनु स्मृतिः)

अर्थात्- धन तो आता-जाता रहता है, धन के क्षीण हो जाने पर भी मनुष्य नष्ट नहीं होता परन्तु चरित्र नष्ट होने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है अतः चरित्र की यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिये।

कुल परम्परा से प्रत्येक क्षत्रिय बालक-बालिका को चरित्र की श्रेष्ठता का ज्ञान वरिष्ठ परिवार जनों एवं समाज द्वारा सदैव प्राप्त होता रहा है। इसके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से हमारा चरित्र समाज के अन्य तीनों वर्णो के लिए अनुकरणीय रहा है। हम इसी चारित्रिक श्रेष्ठता के कारण समाज के शेष अंगों के लिए ''नायक'' के रूप में स्थापित रह सके हैं।

उपरोक्त पृष्ठभूमि में जब हम वर्तमान नियति का वस्तुपरक विश्लेषण करते हैं तो चिंताजनक दृश्य हमारे समक्ष उपस्थित होता है। आज हम देखते हैं कि समाज के अधिकांश सदस्य व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक कर्तव्यों के पालन से विमुख हो रहे हैं। इसका प्रमुख कारण ''चारित्रिक क्षरण'' है। हमारी इस दुर्बलता के कारणों का विवेचन करने पर हमें ज्ञात होता है कि –

चरित्र निर्माण की ''आरम्भिक पाठशाला-संयुक्त परिवार'' स्वयं अब खण्डित होकर ''ध्वन्सावशेष'' के (एकल) रूप में परिवर्तित हो चुकी है। सामाजिक मूल्यों के

संरक्षण एवं अनुशासन के क्षेत्र में व्यापक प्रभाव वाली संस्था ''समाज'' अब अपनी नगण्य प्रभावशीलता के कारण व्यावहारिक रूप से अप्रासंगिक हो गई है।

व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक चरित्र के ''निर्माण'' एवं अनुशासन को लागू करने वाली ''संयुक्त परिवार'' एवं ''समाज'' नामक इन संस्थाओं के क्षीण होने से आज हम ''स्वच्छन्दता' के वातावरण में प्रवेश कर गये हैं।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में विद्यालयों/महाविद्यालयों में संस्कार एवं चरित्र-निर्माण के वातावरण की तो अपेक्षा ही नहीं की जा सकती है। परिणाम धीरे-धीरे नहीं अपितु बहुत तेजी से हमारे समक्ष हैं।

संस्कारहीन बालक-बालिकाओं को हमारी शिक्षा प्रणाली ''व्यक्तिगत स्वतन्त्रता'' के नाम पर ''स्वच्छन्द'' बनाने में उत्प्रेरक की भूमिका निभा रही है। दूषित हो रहे बाहरी परिवेश में ''उच्छृंखलता'' को पोषित कर रहे हैं। आज हमारे समाज में व्यक्तिगत एवं सामाजिक चरित्र में क्षरण के रूप में परिलक्षित हो रही यह प्रवृति विगत 25-30 वर्षों की अवधि में तेजी से बढी है। चारित्रिक रूप से हम ''रसातलगामी'' समाज के अंग बन गये हैं यह कटु सत्य है। हम शेष समाजों के ''नायकत्व'' से राजनैतिक रूप से तो पहले ही च्युत हो चुके थे अब सामाजिक रूप में भी ''च्युत'' हो गये हैं।

ज्ञानार्जन के क्षेत्र से हम सदियों पूर्व विमुख हो चुके थे, राजनैतिक क्षेत्र में लोकतंत्र की स्थापना के बाद आत्मघाती कदम उठाकर हम अपनी प्रभावशीलता निरन्तर कमजोर करते रहे हैं, धनबल कभी हमारा सबल पक्ष था ही नहीं, ''भुजबल'' के साथ सद्‌चरित्र ही हमारी विशेषता थी। वर्तमान समय में भुजबल सैद्धांतिक रूप से अप्रासंगिक है अतः एक मात्र क्षेत्र ''चरित्र'' ही हमारी सर्वश्रेष्ठ पूंजी है इसके रक्षण के सभी सम्भव उपाय करना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिये। चरित्र क्षरण की अत्यन्त गम्भीर एवं संक्रमणशील व्याधि की प्रबलता का कारण बाहरी वातावरण का इसके अनुकूल होना है अतः समाज के प्रत्येक व्यक्ति की एकल एवं सामूहिक प्रतिबद्धता से ही इस व्याधि पर प्रभावी नियंत्रण सम्भव है।

जब हमें ''व्याधि'' के कारणों का पता चल गया है तो इसको उपचारित करने के उपाय (इसके 'मूल' को नष्ट करने के लिए सरल एवं व्यावहारिक प्रयास) व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से करने के लिए विचारार्थ प्रस्तुत है-एकल (पारिवारिक) स्तर के उपाय -

(क) बाल्यावस्था में बालक/बालिकाओं को परिवार के वरिष्ठ सदस्यों के सान्निध्य में रखने के ईमानदार प्रयास, इसमें बच्चा उनसे पारिवारिक मूल्यों, धार्मिक विश्वासों आदि बाबत व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करेगा एवं टी.वी., मोबाईल आदि प्रदूषण फैलाने वाले उपकरणों से यथासम्भव दूर रहेगा।

(ख) प्रत्येक त्योहार, उत्सव, महापुरुषों की जयन्ति, पुण्यतिथि पर सम्बन्धित जानकारी प्राप्त कर बच्चों के साथ साझा करना।

(ग) शहरी क्षेत्रों में रहने वाले परिवारों को अपने मूल निवास (पैतृक स्थान) पर आयोजित होने वाले पारिवारिक/सामाजिक समारोहों में बच्चों को अधिकाधिक संख्या में ले जाने में उनके भीतर सामाजिकता की भावना का विकास एवं गृह स्थान से लगाव बढेगा।

(घ) संस्कार विकास हेतु सामाजिक संस्थाओं/संगठनों द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में बच्चों की भागीदारी बढाने का सतत् प्रयास करना।

(ङ) बच्चों को इलैक्ट्रोनिक उपकरणों के अधिक प्रयोग के दुष्प्रभावों से सदैव अवगत कराना तथा इन माध्यमों में उपलब्ध धार्मिक, ऐतिहासिक सकारात्मक सामग्री के अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करना एवं पाठ्यसामग्री बच्चों को उपलब्ध करवाना।

सामाजिक स्तर के उपाय– हमारे समाज के विभिन्न संगठन देश और विशेष रूप से प्रदेश में जिला स्तर तक फैले हुए हैं, इन संगठनों की प्राथमिकता में बालक/बालिकाओ के चरित्र निर्माण के संस्कार प्रदान करने वाले कार्यक्रमों के आयोजन की विशेष आवश्यकता है यथा–

(च) श्री क्षत्रिय युवक संघ विगत 78 वर्षों से इस क्षेत्र सहित समाज में अमृत तत्व के विकास के लिए व्यष्टि से समष्टि के कल्याण बाबत वातावरण निर्माण कर व्यक्तियों को जोड़ रहा है। बालक/बालिकाओं के लिए शिविरों का आयोजन, दम्पत्ति शिविरों का आयोजन एवं नियमित शाखाओं का आयोजन बहुत सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करने वाले कार्य हैं जो 'संघ'' कर रहा है। समाज के शेष वर्ग इन कार्यक्रमों का अनूपूरक बनकर गुणात्मक रूप के साथ–साथ संख्यात्मक रूप से प्रतिभागिता बढाकर आयोजनों को सफल बनाने की आवश्यकता है।

(छ) ग्राम/ब्लाक/तहसील/जिला स्तर पर कार्यरत अन्य सामाजिक संस्थान यथा श्री राजपूत सभा, जयमल जी, जैता जी, कूम्पा जी, महाराणा कुम्भा, महाराणा भूपाल, सम्राट पृथ्वीराज चौहान, अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा आदि के नाम से कार्यरत विभिन्न क्षत्रिय संगठन विशेष रूप में बालका/बालिका केन्द्रित ऐसे कार्यक्रम जिनका उद्देश्य संस्कार एवं चरित्र निर्माण हो उनका आयोजन करें यथा हमारे आदर्श क्षत्रिय (बालक/बालिकाओं सहित) चरित्रों बाबत ज्ञान प्रश्नोत्तरी, लेखन, भाषण, गायन एवं खेल प्रतियोगिताओं का आयोजन करें जिसमें नई पीढी के लोग समाज की मुख्य धारा में सकारात्मक भाव के साथ जुड़ सकें।

(ज) हमारे समाज के लोगों द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थानों में क्षत्रिय चरित्रों बाबत उपरोक्त कार्यक्रमों का आयोजन केवल क्षत्रिय प्रतिभागियों के लिए किया जा सकता है।

(झ) समाज के आर्थिक रूप से सक्षम व्यक्तियों द्वारा उपरोक्त प्रकार के आयोजनों में उदार हृदय से आर्थिक सहयोग प्रदान किया जा सकता है।

(ञ) राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में नेतृत्व करने वाले महानुभाव विभिन्न मंचों पर चरित्र निर्माण विषयक चर्चा को जीवन्त बनाये रखें एवं इस क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने वाले व्यक्तियों तथा संगठनों को सार्वजनिक रूप से सम्मानित कर आर्थिक/सामाजिक सहयोग द्वारा उत्साहवर्धन कर सकते हैं।

उपरोक्त बिन्दु मात्र उदाहरण स्वरूप दिये जा रहे हैं इसके अतिरिक्त अनेक उपाय हो सकते हैं। सुधी पाठकों एवं प्रज्ञावान समाज जनों से यह सकारात्मक आह्वान है कि समाज में नई पीढी को हमारी सर्वश्रेष्ठ पूंजी ''चरित्र'' के बावत सम्यक ज्ञान प्रदान कर उनको अच्छे एवं सच्चे क्षत्रिय के रूप में राष्ट्र सेवा के लिए तैयार करना है। ●

जहाँ सोच समझकर कदम उठाना हो, वहाँ बिना सोचे समझे ही बढ जावें और जहाँ बिना सोचे–समझे ही विश्वास के सहारे आगे बढना होता है, वहाँ जो लोग विचार–समाधि में डूब जावें, ऐसे लोग साधक जीवन की महत्त्वपूर्ण क्षमता से रहित होते हैं। उन्हें विकसित मान लेना दिवा स्वप्न देखना है। विकास का अर्थ विश्वास का उत्तरोत्तर व्यावहारिक धरातल पर साहसी बनना है।

– पू. तनसिंह जी

गतांक से आगे

आओ! कुछ चिन्तन करें

– संकलित

संस्थाओं की उपयोगिता :– समाज संगठन, दिशा दृष्टि और जागरुकता लाने के लिए समाज में संस्थाएँ शुरू में जोश–खरोश के साथ बनती हैं लेकिन थोड़े समय बाद अपनी महत्ता को खो देती हैं।

संस्थाओं की जरूरत को नकारा नहीं जा सकता। संस्थाएँ निश्चित रूप से होनी चाहिए लेकिन संस्थाओं के पीछे चिंतन होना चाहिए, उनके पदाधिकारी सुयोग्य हों और वे एक सकारात्मक सोच को लेकर चलें। संस्थाओं के गठन के बाद उनकी योजना बने, उसकी क्रियान्विती हो और समाज में उनका प्रभाव बढ़े। संस्थाओं में गतिशीलता होनी चाहिए। हमारे समाज में संस्थाएँ बनते हुए तो देर नहीं लगती लेकिन उतनी ही जल्दी वे प्रभावहीन भी हो जाती हैं। जो संस्थाएँ समाज को रूढ़ बनाती हैं ऐसी संस्थाएँ उपयोगी नहीं हो सकती।

यह भी ध्यान रहे कि एक उद्देश्य को लेकर कई संस्थाएँ न बने अपितु एक संस्था हो अन्यथा कार्यकताओं का बंटवारा हो जाता है और उनमें गलत प्रतिस्पर्धा भी पैदा हो जाती है। यह स्थिति जल्दी ही संस्था को खत्म कर देती है। आज भी संस्थाओं के नाम पर राजपूत समाज में कुछ संस्थाएँ बनी हुई हैं लेकिन अगर उनकी समीक्षा की जाये तो वे निष्क्रिय प्रतीत होती हैं। छोटे कार्यों के लिए बनी संस्थाओं का जीवन लम्बा नहीं हो सकता।

कई बार एक संस्था की प्रतिक्रिया में भी दूसरी संस्था गठित होती है। हमारे समाज में कई संस्थाएँ अहम और बड़प्पन के दिखावे के रूप में भी बनती हैं जिनके कारण व्यक्ति बड़ा और संस्था छोटी हो जाती है। धीरे–धीरे ऐसी संस्थाएँ स्वतः उपेक्षा का शिकार बन जाती हैं और संस्थाओं से जुड़े लोगों में भी उदासीनता आ जाती है।

कई बार निष्क्रिय लोगों को भी नाम और प्रभाव के आधार पर संस्थाओं में जोड़ लेते हैं। ऐसे लोगों के नाम का उपयोग कई संस्थाएँ लाभ लेने की दृष्टि से करती हैं लेकिन ऐसे लोगों के पास न समय होता है और न क्रियाशीलता। फलतः संस्था गठन दूरदर्शितापूर्ण नहीं होता तो फिर संस्था चलेगी कैसे? संस्थाओं की वर्ष में दो बार समीक्षा आवश्यक है तभी संस्था में सुधार एवं गतिशीलता आ सकती है। सामाजिक संगठनों में रुचि पैदा करना भी संस्था का एक लक्ष्य होना चाहिए। लोग जुड़े रहें, बिखराव न आए और जिस उद्देश्य के लिए संस्था बनी है उसकी पूर्ति में कुछ न कुछ होता रहे।

संस्थाएँ बनाना व्यक्ति का शौक न हो। आज के प्रचार–प्रसार के युग में सस्ती लोकप्रियता लेने के उद्देश्य से भी कुछ लोग तुरत–फुरत संस्था बनाकर भीड़ जुटा लेते हैं। अखबारों में खबरें एवं फोटुएं छप जाती हैं। इसके बाद संस्था ढूंढने पर भी नहीं मिलती। ऐसी जेबी संस्थाओं के माध्यम से व्यक्ति निजी सरोकारों की पूर्ति करता रहता है। वे संस्थाएं लेटरपैड तक सीमित रह जाती हैं। अतः संस्था गठन से पूर्व उसकी आवश्यकता को समझा जाये। आवश्यक और अनावश्यक कार्यों के बीच यह तय किया जाए कि प्राथमिकता किस कार्य को दी जानी है। कई बार ऐसा नहीं हो पाता है जिसके कारण संस्था का परिणाम अच्छा नहीं रहता और कार्यकर्ता निराश हो जाता है।

जिनमें कुशल नेतृत्व की क्षमता हो, सामाजिक चिन्तन की दिशा–दृष्टि और संगठनात्मक भावना का व्यापक दृष्टिकोण हो, ऐसे लोगों की संस्थाएँ समाज में निश्चित रूप से गतिशील होती हैं। बहरहाल, यह दाव कुछ संस्थाओं पर निर्भर करता है लेकिन संस्थाओं की उपयोगिता समाज का प्रत्येक घटक

महसूस करता है। संस्थाएँ बननी चाहिए तभी समाज गतिशील हो सकता है।

राजनीति की भागीदारी :– आज राजनीति सब जगह हावी है उसका प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव सब पर है। राजनीति से हम अलग रह नहीं सकते। राजनीति के प्रति जैसी रुचि, जैसा सम्मान और जैसी लगन आज दिखाई देती है, ऐसी पहले कभी नहीं रही। आज हर आदमी अपने को नेतृत्व का दावेदार मानता है। सुबह से शाम तक नेतागिरि में सक्रिय रहने वाले नेताओं में कितना समर्पण और कितना जोड़–तोड़ का भाव है, इसे अब सब लोग जानने लगे हैं। नेतागिरी भले ही व्यवसाय या धंधा हो गई हो लेकिन राजनीति के ऐसे दलालों के बिना आज कुछ सहज रूप में सम्भव भी नहीं है।

राजनीति से जुड़ना आज आवश्यक है भले ही राजनीति कितनी भी मूल्यहीन क्यों न हो। एक सीमा तक उसकी उपयोगिता है। समाज को राजनीति से जुड़ना चाहिए। अलग–अलग लोगों को अलग–अलग राजनीतिक दलों का चुनाव करते हुए सक्रिय रहना चाहिए। पूरा समाज एक दल का पिछलग्गू नहीं हो सकता और न होना चाहिए। हर दल की अपनी सोच और अपनी नीति होती है ऐसी स्थिति में अगर समाज के लोग सभी मोर्चों पर सक्रिय होकर आगे बढ़ते हैं तो उससे समाज को लाभ हो सकता है और हर जगह अपने व्यक्तियों का वर्चस्व कायम हो सकता है। हमारे समाज के लोगों में आज भी कुछ ऐसे गुण हैं जो राजनीति में अपनी छाप छोड़ सकते हैं। **(क्रमशः)**

प्रेषक : **भंवरसिंह मांडासी**

साभार : **राजपूत निर्देशिका**

''परम्पराओं के विद्वान पुरुष अपने–अपने क्षेत्रों की प्रथाओं का पालन करते हैं। उन्होंने एक क्षेत्र की प्रथाओं को सूचीबद्ध किया जो दूसरे क्षेत्र के प्रतिकूल थीं, जबकि अपने–अपने संदर्भों में दोनों ने श्रुति और स्मृति का अनुसरण किया था। भौगोलिक रूप से नीतियों को स्थानीय बनाने के अतिरिक्त धर्म विभिन्न तत्वों जैसे– जीवन का पड़ाव (आश्रम धर्म), व्यसायिक प्रवृति (वर्णधर्म), जातिगत नियम (जाति धर्म), व्यक्तिगत स्वभाव (स्वभाव धर्म) एवं अपनेपन का चुनाव (स्वधर्म) इत्यादि को प्रतिबिम्बित करना है। धर्म असाधारण परिस्थितियों में जैसे किसी दबाव अथवा आपातकाल के समय व्यक्ति को वह सब कुछ करने की छूट देता है जो सामान्यत: गलत माना जाता है। यह 'आपद धर्म' की श्रेणी के अन्तर्गत आता है। एक साधारण–धर्म (पूर्णरूपेण सार्वभौमिकता) भी है जो शास्त्रों में 'अन्तिम उपाय' के रूप में चिह्नित किया गया है, अर्थात् यदि कोई प्रसंग लागू न हो तब इसका पालन करो।''

– दार्शनिक बोधायन 800 ई. पूर्व

गतांक से आगे

खंडहर बता रहे वैभव की गाथा

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

गुजरात का राष्ट्रकूट राज्य– दक्षिण के शक्ति सम्पन्न शासक दन्तिवर्मा द्वितीय (पूर्व लिखित क्र.सं. 6) के समय वि.सं. 810 के लगभग दक्षिण एवं मध्य गुजरात (लाटक्षेत्र) पर अधिकार हो गया था। एक ताम्रपत्र के अध्ययन के आधार पर 'राष्ट्रकूटों का इतिहास' में लिखा कि 'दन्तिवर्मा द्वितीय ने अपनी सोलंकियों पर की गई विजय के समय अपने रिश्तेदार कर्कराज को लाट प्रदेश का स्वामी बना दिया था।' गुजरात के ये शासक मान्यखेट के राष्ट्रकूट नरेशों के अधीन शासन करते थे। यहाँ कर्कराज प्रथम के पश्चात ध्रुवराज, गोविन्दराज एवं कर्कराज द्वितीय क्रमश: शासक बने। कर्कराज द्वितीय बड़ा प्रतापी और शिवभक्त शासक था। इसने मान्यखेट की सत्ता से अपने आपको मुक्त कर परममाहेश्वर, परमभट्टारक, परमेश्वर और महाराजाधिराज की उपाधियाँ धारण की तथा अन्य सामन्तों के सहयोग से शक्तिशाली बन गया। दक्षिण भारत के राष्ट्रकूटों (राठौड़) के सर्वेसवा मान्यखेट के शासक गोविन्दराज तृतीय (पूर्व वर्णित क्र.सं. 10) के समय कर्कराज द्वितीय को परास्त कर गुजरात के मध्य और दक्षिण भाग (लाट देश) को पुन: अपने अधीन किया तथा शेष क्षेत्र के शासक प्रतिहार राजा यशोवर्मा को भी परास्त कर समस्त गुजरात पर अधिकार कर लिया। वि.सं. 860 के लगभग राष्ट्रकूटों की गुजरात में प्रथम शाखा का राज्य समाप्त हुआ तथा द्वितीय शाखा का शासनकाल प्रारम्भ हुआ, जिसके शासकों का इतिहास इस प्रकार उपलब्ध है–

1. इन्द्रराज– यह मान्यखेट के राष्ट्रकूट (राठौड़) राजा ध्रुवराज का पुत्र और गोविन्दराज तृतीय का भाई था। वि.सं. 865 के ताम्र पत्र में गुजरात के मध्य और दक्षिण भाग (लाट प्रदेश) के विजय का उल्लेख है। इस विजय को स्थाई करने के लिये गोविन्दराज तृतीय ने अपने विश्वसनीय छोटे भाई इन्द्रराज को नियुक्त कर अपना सामंत बनाया। इसने राज्यसत्ता पर पकड़ मजबूत कर अपने भाई मान्यखेट के शासक गोविन्दराज तृतीय की शक्ति को सुदृढ़ता प्रदान की।

2. कर्कराज– यह इन्द्रराज का पुत्र था जो उसके बाद राष्ट्रकूटों द्वारा शासित गुजरात एवं निकटवृति क्षेत्र का शासक बना। कर्कराज के समय के तीन ताम्रपत्र (वि.सं. 869, 873, 881) प्राप्त हुये हैं जो इसके पूर्वजों एवं राज्य सम्बन्धी जानकारी के लिये महत्त्वपूर्ण हैं। महासामन्ताधिपति, लाटेश्वर और सुवर्णवर्ष उपाधियों से विभूषित कर्कराज ने मान्यखेट के राजा अमोघवर्ष प्रथम को उसके पिता की गद्दी पर बैठाने में सहायता की थी।

3. गोविन्दराज– यह कर्कराज का छोटा भाई था जो उसका उत्तराधिकारी बना। गोविन्दराज के समय के दो ताम्रपत्र मिलते हैं। प्रथम में महासामन्ताधिपति व प्रभूत्व वर्ण उपाधियों का वर्णन है। द्वितीय में जयादित्य नामक सूर्य मन्दिर के लिए एक गाँव दान में देने का उल्लेख है।

4. ध्रुवराज प्रथम– यह कर्कराज का पुत्र था जो गोविन्दराज के बाद राज्य का उत्तराधिकारी बना। महासामन्ताधिपति, धरावर्ष एवं निरुपम इसकी उपाधियाँ थी। इसके बाद इस वंश में (5) अकालवर्ष (6) ध्रुवराज द्वितीय (7) दन्तिवर्मा (8) कृष्णराज क्रमश: गुजरात क्षेत्र के राष्ट्रकूट शासक हुये। गुजरात के इन सामंत शासकों द्वारा शक्तिसम्पन्न बनकर चुनौती देने के कारण मान्यखेट के राजा कृष्णराज द्वितीय ने वि.सं. 967 के लगभग अपनी राजधानी के सीधे नियंत्रण में कर लिया।

राजपूताना के पहले राष्ट्रकूट (राठौड़)–

दक्षिण के राष्ट्रकूट राज्य मान्यखेट द्वारा शासित एवं गुजरात में सामंताधिपति के रूप में स्थापित राठौड़ों की इस शाखा का विक्रम की 10वीं शताब्दी के लगभग प्रारम्भ में राजस्थान (मरुप्रदेश) में प्रवेश हुआ। पाली जिले में हस्तिकुंडी (हथूंडी) नामक स्थान पर यह पल्लवित-पुष्पित हुयी। पूर्व अध्ययन के अनुसार गुजरात की इस शाखा के प्रथम सामंत शासक इन्द्रराज के बाद उसका बड़ा पुत्र कर्कराज एवं उसके बाद गोविन्दराज राज्य के उत्तराधिकारी हुये। गोविन्दराज के पश्चात् बड़े भाई कर्कराज का पुत्र ध्रुवराज प्रथम गुजरात क्षेत्र का शासक बना। सम्भवत परिस्थितियों ने नये इतिहास का निर्माण किया। पूर्व शासक गोविन्दराज के पुत्र-पौत्रों को गुजरात क्षेत्र के राज्य में कोई प्रतिष्ठापूर्ण पद प्राप्त नहीं हुआ, परिणामस्वरूप गोविन्दराज के महत्त्वाकांक्षी पुत्र-पौत्रों ने दक्षिण के मान्यखेट राज्य व गुजरात क्षेत्र के अन्तिम छोर पर स्थित क्षेत्र को अपनी कर्मस्थली निर्धारित किया। सामरिक दृष्टि से सुरक्षित एवं संसाधनों की दृष्टि से सम्पन्न रणकपुर से 30 कि.मी., बाली से 20 कि.मी., जवाई रेल्वे स्टेशन से 15 कि.मी. तथा बिजापुर के पास हस्तिकुंडी (हथूंडी) को अपनी राजधानी बनाया। मान्यखेट के शक्ति सम्पन्न राष्ट्रकूट राजा एवं गुजरात के सामंताधिपति ने इस राज्य को सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी होगी क्योंकि यह राष्ट्रकूट राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र की सुरक्षा करने वाला प्रयास माना गया। 'हस्तिकुंडी का इतिहास' में लिखा है 'राष्ट्रकूट राजाओं ने पश्चिमी राजस्थान को दिग्विजय किया था, हस्तिकुंडी के राष्ट्रकूट शायद उन्हीं के वंशज थे।' यह हथूंडिया राठौड़ों की जन्मस्थली है, इसके सम्बन्ध में विश्वेश्वरनाथ रेउ, डॉ. सोहनलाल पटनी एवं डॉ. हुकम सिंह भाटी ने विस्तार से लिखा है।

1. हरि वर्मा– जोधपुर राज्य के गोडवाड़ परगने में बीजापुर से वि.सं. 1053 का एक शिलालेख मिला है, इसमें हथूंडी के राठौड़ों की वंशावली में हरिवर्मा का नाम प्रथम स्थान पर लिखा हुआ है, सम्भवत: यह गोविन्दराज (गुजरात क्षेत्र का शासक) का पुत्र था। इसके राज्य स्थापित करने पर गुजरात के शासक द्वारा विरोध करने के प्रमाण नहीं हैं, शायद इसे सुरक्षा कवच माना गया तथा इस वंश में यह एकता बनाये रखने का प्रयास सिद्ध हुआ होगा।

2. विदग्धराज– हरिवर्मा का पुत्र जो उसका उत्तराधिकारी हुआ। यह वि.सं. 973 (जर्नल बंगाल एशियाटिक सोसाइटी भाग-62, पृष्ठ 314 के आधार पर) में हथूंडी का शासक होना प्रमाणित होता है। 'हस्तिकुंडी का इतिहास' के अनुसार 'ये मेवाड़ के राजा अल्लट के मित्र थे। अल्लट के परामर्श से ही विदग्धराज ने बलिभद्र सूरि जी को हस्तिकुण्डी में बुलाया था और उनके उपदेश से जैन धर्म भी स्वीकार किया था।'

3. मम्मटराज– यह विदग्धराज का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। जैन धर्म में आस्था रखने वाले इस शासक ने सर्वप्रथम नैतिक शिक्षा के आदेश द्वारा अपनी प्रजा को बताया कि 'देवद्रव्य एवं गुरुद्रव्य का भक्षण करना महा पाप है।' इसके राज्यकाल (वि.सं. 996) में आचार्य सर्वदेवसूरि का हस्तिकुंडी में आगमन हुआ था जिनके उपदेश से प्रभावित होकर राजपरिवार के कुछ सदस्यों ने जैन धर्म स्वीकार किया था।

4. धवलराज– मम्मटराज का पुत्र धवलराज जैन धर्म में आस्था रखने वाला शक्तिशाली शासक था। इसने अपने मित्र चित्तौड़ के शासक महेन्द्र की सहायता कर उसके शत्रुओं को परास्त किया था। धनुर्विद्या में पारंगत धवलराज पड़ोसी शासकों का संरक्षक हो गया था। अपने राज्य में जैन मन्दिरों का जिर्णोद्धार एवं अनेक जनहित के कार्य करवाये। धवलराज के समय हथूंडी की प्रतिष्ठा चरम सीमा पर थी इसलिये सम्भव है कि इसके संरक्षण में अन्य क्षेत्रों पर भी इस शाखा का राज्य

स्थापित हुआ। श्री नरेन्द्र सिंह जसनगर के शोधालेख के अनुसार 'वर्तमान राजस्थान में धनोप, शाहपुरा, नोगाम, बांसवाड़ा, हथूंडी, गोड़वाड़ क्षेत्र में 11वीं सदी तक राष्ट्रकूटों का अस्तित्व मिलता है।' इसके अतिरिक्त सम्भवत कोलासर आदि अन्य क्षेत्रों पर भी लोकप्रिय एवं प्रभावशाली धवलराज के समय हथूंडिया राजपरिवार के सदस्यों ने राज्यसत्ता स्थापित की थी। कोलासर (रतनगढ़) से 4 कि.मी. हुडेरा जोगियान में वि.सं. 1309 का स्मारक लेख प्राप्त हुआ है जिसके सम्बन्ध में हम आगे के पृष्ठों पर समीक्षा करेंगे। धवलराज के समकालीन परमार मुंज, चौहान दुर्लभराज, चौहान महेन्द्र, सोलंकी मूलराज और प्रतिहार धरणीवराह आदि प्रभावशाली शासक थे अधिकतर शासकों को संरक्षण प्राप्त होने पर मित्रभाव रखते थे तथा अन्य शासक भयभीत होकर अपनी राज्य सीमा में ही रहते थे। धवलराज के समय वि.सं. 1053 का शिलालेख राज्य की समस्त जानकारी प्रदान करता है।

5. बालाप्रसाद– धवलराज ने राज्यकार्य की अधिकता एवं बढ़ती उम्र के कारण अपने जीवनकाल में ही प्रियपुत्र बालाप्रसाद को राज्य संचालन के पर्याप्त अधिकार प्रदान कर दिये थे। विशेष प्रतिभा नहीं होने पर भी राज्य व्यवस्था सुचारू रूप से संचालित रही।

6. नामदत्त (नामदत्त वर्मा)– धवलराज के बाद हथूंडी प्रतिष्ठित राज्यों में गिना जाने लगा इसलिए यहाँ के राष्ट्रकूट शासक हथूंडिया राठौड़ के नाम से प्रतिष्ठित एवं प्रचारित हुए। नामदत्त के राज्यकाल के समय महमूद गजनी ने सोमनाथ पर आक्रमण किया था। नामदत्त हथूंडिया एवं नाडोल के शासक रामपाल चौहान ने मिलकर गजनी की सेना के साथ युद्ध किया लेकिन परास्त हुये। क्रोधित आक्रान्ता ने हथूंडी के मन्दिर एवं महल–किलों को नष्ट कर दिया था। इसके बाद शक्तिसम्पन्न हथूंडी कमजोर राज्य हो गया। नाडोल राज्य को भी काफी क्षति हुयी।

7. सिंगा हथूंडिया– यह उजड़ी हुयी, साधनहीन हथूंडी का राजा बना। इसने हथूंडी को पुन: प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया लेकिन सफल नहीं हुआ और बरसिंघ बालिसा चौहान के साथ वि.सं. 1232 में हुये युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ। इस सम्बन्ध में इतिहास प्रसिद्ध एक दोहा है–

बरबे लीधो बांकड़ै, बाहां बल बालीस।
सींगो कमधज साजियो, बारा सें बत्तीस।।

भावार्थ है कि बालिसा चौहान बरसिंह ने सिंगा राठौड़ को मार कर अपने भुजबल से इस क्षेत्र पर वि.सं. 1232 में अधिकार कर लिया। स्मरण रहे, यह सिंगा हथूंडिया राठौड़ था। लोकसाहित्य में इस खांप (शाखा) को हतूड़िया (हटूंडिया) भी कहा जाता है। कुछ लेखकों ने नाम एवं वंश की समानता के कारण दक्षिण की मान्यखेट शाखा के राष्ट्रकूट (राठौड़) जो गुजरात क्षेत्र से आये हथूंडी शाखा के सिंगा हथूंडिया राठौड़ तथा उत्तर भारत के कन्नोज राज्य के बदायूं क्षेत्र से राव सीहा दानेश्वरा राठौड़ के नाम को एक बताकर भ्रम पैदा कर दिया है। यह दोहा सिंगा हथूंडिया के सम्बन्ध में है क्योंकि वि.सं. 1232 में राव सीहा दानेश्वरा राठौड़ ने मरुभूमि में प्रवेश नहीं किया था। राव सीहा राठौड़ का आगमन वि.सं. 1292 में पाली क्षेत्र में हुआ था।

(क्रमश:)

जीवन का यह अंतिम सार मधुर निकले, अन्त की वह घड़ी मधुर हो, इसी दृष्टिसे जीवन के सारे उद्योग होने चाहिए जिसका अन्त मधुर उसका सब मधुर।

– विनोबा भावे

अपनी बात

सद्संस्कारों का निर्माण ही सच्चा जीवन निर्माण है। अधिकांश लोग जीवन निर्माण का रूप ही दूसरा समझते हैं। अधिक धन कमा रहा है, उच्च पद प्राप्त कर रहा है, सांसारिक सुख-सुविधाएँ जुटा रहा है, खूब पढ-लिखकर बहुत अच्छा बोल सकता है, ऐसे लेगों के लिये आज के युग में कहा जाता है कि इनका जीवन कितना अच्छा है। लौकिक कार्यों में ही जो प्रयत्नशील रहता है, अन्तत: उसका जीवन निर्माण के सच्चे स्वरूप से कोई सम्बन्ध नहीं है। कुसंस्कारों को नष्ट करना ही सच्चा जीवन निर्माण है। कुसंस्कार अज्ञान जनित होते हैं। जीवन की सार्थकता स्थापित करने के लिए इनको नष्ट करना आवश्यक है।

सामुहिक संस्कारमयी कर्म प्रणाली के माध्यम से श्री क्षत्रिय युवक संघ में संस्कार निर्माण की प्रक्रिया चलती रहती है। कुसंस्कारों को नष्ट करें और सद्संस्कारों को जीवन में धारण करें, यही प्रयास निरन्तर चलता रहता है। कुसंस्कार हमारे आन्तरिक शत्रु हैं। ये आंतरिक शत्रु इतने भयंकर होते हैं कि कभी भी उद्‌बुद्ध होकर अब तक की गई संस्कार निर्माण प्रक्रिया में प्रबल बाधक बन जाते हैं। अत: इन कुसंस्कारों को नष्ट किये बिना साधना की बात सोची भी नहीं जा सकती। इसलिए इन कुसंस्कारों को पहचान कर हमारी संस्कारमयी कर्म प्रणाली के माध्यम से इनसे युद्ध प्रारम्भ कर देना है। प्रणाली हमें वातावरण देती है, युद्ध जो कुसंस्कारों से करना है, वह व्यक्तिगत होगा। सामुहिक निर्देशों के पालन में मैं कितना सजग हूँ, अपने कुसंस्कार को मैंने पहचान लिया है या नहीं, पहचान लिया है तो अब इसको किस तरह से घेरकर परास्त करूँ, यह सब तो मुझे ही करना है। प्रणाली पहचान कराने में और हमारे प्रयत्नों के अनुकूल वातावरण देकर प्रोत्साहित करने में सहयोगी बनती है।

एक गाँव में एक सारंगी बजाने वाला व्यक्ति सारंगी की मोहक धुन सुनाकर माँगने के लिए आया। जैसे ही उसने सारंगी बजाना प्रारम्भ किया, गाँव के कुत्ते भौंकते हुए उसके पीछे पड़ गए। वह चाहता था कि उसकी सारंगी की प्यारी धुन सुनकर घर-घर से लोग दरवाजा खोलेंगे और मुझे कुछ देंगे। परन्तु कुत्तों के भौंकने में सारंगी की आवाज ही दब गई। दो दिन बीत गए पर वह अपनी कला का पारितोषिक प्राप्त नहीं कर सका। तीसरे दिन उसने सोचा अब मुझे ही कुछ करना है और सारंगी बजाकर एक संकरी गली में पहुँचा और कुत्तों को वहाँ घेर लिया। अब वह सारंगी बजाने लगा और लगातार बजाता ही रहा। भौंकते-भौंकते कुत्ते इतने थक गए कि चुप ही हो गए।

हमारी वासनाएँ, हमारे कुसंस्कार ऐसे ही कुत्ते हैं। साधना मार्ग में ये अपने-अपने रूप के भौंकने अर्थात् बाधक बनने में कमी नहीं रखते। साधना की गति में ऐसे कुविचार भी आते रहते हैं। इसलिए समय-समय पर एकान्त में बैठकर आँखें बन्द कर इन कुसंस्कारों, इन कुविचारों, इन वासनाओं से युद्ध हमें ही करना होगा। ऐसा युद्ध करें कि इनका भौंकना ही बन्द हो जाये। अत: अपने मन को देखें, इच्छाओं को पहचानें और संघ के निर्देश के अनुकूल सद्संस्कारों के अभ्यास से जीवन निर्माण की राह पकड़ें। संघ ने हमें रोज डायरी लिखने का कहा है, शान्त मन से बैठकर अपने जीवन की सच्चाई ही उसमें प्रकट करनी है और जो भी कुविचार है, उसके दूर करने का संकल्प लें। फिर प्रतिदिन यह बात भी प्रकट करनी है कि इस संकल्प पर मैं कितना अनुकूल चल रहा हूँ, प्रयास कर रहा हूँ। ऐसा मानस प्रतिदिन दृढ़ता बनाता रहे, तो आन्तरिक रूप से जीवन निर्माण प्रक्रिया गति पकड़ेगी।

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं –

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01.	मा.प्र.शि. बालक वर्ग	10.04.2025 से 14.04.2025	प्रताप हाऊस, भूपाल नोबल्स (बी.एन. यूनिवर्सिटी) उदयपुर 9 की रात्रि तक पहुँचना है तथा 14 की शाम तक शिविर रहेगा। इस शिविर में 2 पीटीसी किए हुए व 8वीं से ऊपर के स्वयंसेवक भाग ले सकते हैं। सम्पर्क सूत्र : 9413813601, 9829081971, 9414211465
02.	दम्पत्ति	12.04.2025 से 14.04.2025	(चित्तौड़गढ़) पति–पत्नी में से किसी एक का कम से कम एक प्रा.प्र.शि. किया हुआ हो। शिविर स्व पोषित है।
03.	प्रा.प्र.शिविर बालक वर्ग	12.04.2025 से 14.04.2025	रामगढ़ राजपूत छात्रावास, जिला–जैसलमेर शिविर 18 से 35 वर्ष के युवा वर्ग के लिए है।
04.	प्रा.प्र.शिविर बालक वर्ग	09.05.2025 से 12.05.2025	श्री केवाय माता मंदिर बावतरा, तह. सायला–जालौर बाड़मेर–जालौर हाई–वे पर स्थित। सम्पर्क सूत्र– श्री गजेन्द्र सिंह कोमता – मो. : 9461453360 श्री इन्द्र सिंह सायला – मो. 9982831051
05.	उ.प्र.शिविर बालक वर्ग	18.05.2025 से 29.05.2025	उदयपुर। 10वीं की परीक्षा दी हो। एक मा.प्र.शि. तथा दो प्रा.प्र.शि. किया हो।
06.	मा.प्र.शि. मातृशक्ति	23.05.2025 से 29.05.2025	उदयपुर। 10वीं उत्तीर्ण। कम से कम दो शिविर किये हो। सायंकालीन प्रार्थना में पारम्परिक गणवेश–केसरिया साड़ी या पोशाक

गजेन्द्र सिंह आऊ

शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

जो किसी के गुणों को नहीं देखता, उसके गुणों को कौन अनुभव कर सकेगा? जो दुर्गुणों की टोह लगाता फिरता है, उससे दुनिया दूर भागती है। नेता बनकर भी वह जन समुदाय को मार्ग नहीं बता सकेगा बल्कि जन समुदाय के पीछे कोल्हू के बैल की तरह चलता रहेगा।

– पू. तनसिंह जी

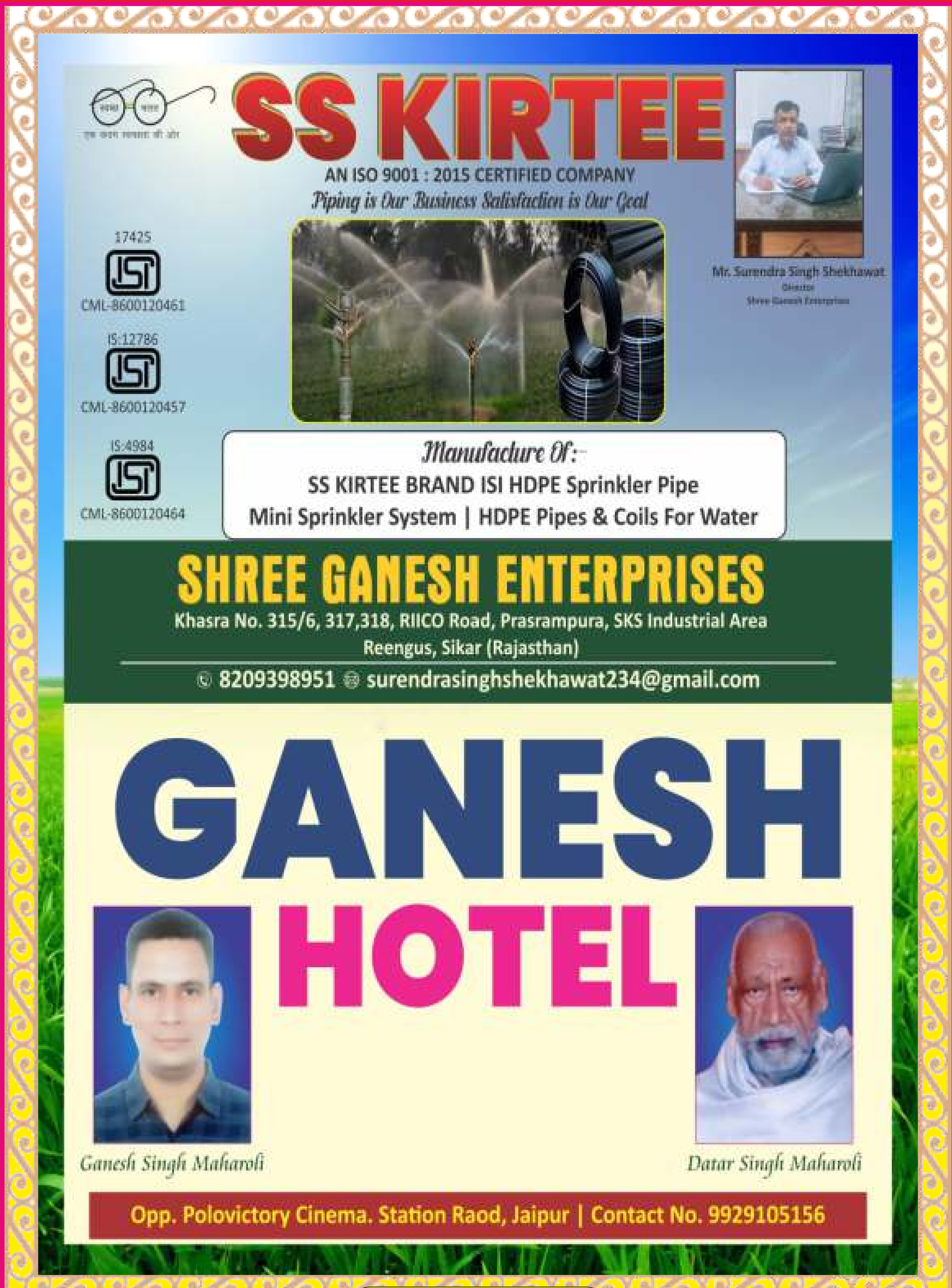

SS KIRTEE
AN ISO 9001 : 2015 CERTIFIED COMPANY
Piping is Our Business Satisfaction is Our Goal
17425
CML-8600120461
IS:12786
CML-8600120457
IS:4984
CML-8600120464
Mr. Surendra Singh Shekhawat
Manufacture Of:-
SS KIRTEE BRAND ISI HDPE Sprinkler Pipe
Mini Sprinkler System | HDPE Pipes & Coils For Water
SHREE GANESH ENTERPRISES
Khasra No. 315/6, 317,318, RIICO Road, Prasrampura, SKS Industrial Area
Reengus, Sikar (Rajasthan)
8209398951 surendrasinghshekhawat234@gmail.com
GANESH
HOTEL
Ganesh Singh Maharoli
Datar Singh Maharoli
Opp. Polovictory Cinema. Station Raod, Jaipur | Contact No. 9929105156

अप्रेल, सन् 2025
वर्ष : 62, अंक : 04

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या – Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड़, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़। Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org